श्रीहरि:

राजस्थान-केशरी

अथवा

महाराणा प्रतापसिंह

(ऐतिहासिक नाटक)

काशीनिवासी

श्रीराधाकृष्णदास विरचित

"जो हठ रक्खै धर्म को तेहि रक्खै करतार"

बनारस

चन्द्रप्रभा प्रेस कम्पनी लिमिटेड

१९९८

श्रीहरिः

निवेदन

—:o:—

पूज्यपाद भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र जी ने एक याददाश्त पर लिखा था कि "किसी नाटक में (प्रतापसिंह के) अकबर की बदमाशी की पालिसी स्पष्ट करके दिखलाना" उसे देखकर मैंने इस नाटक को लिखना आरम्भ किया और जगदीश्वर की कृपा से आज पूरा करके आपलोगों की भेट करता हूं॥

यद्यपि वीरवर महाराणा प्रतापसिंह तथा राजनीति विशारद अकबर का चरित्र जैसा अङ्कित करना चाहिये वैसा करने की तो मुझे सामर्थ्य नहीं है, तथापि यदि मेरे इस नाटक से उक्त भारतमुखोज्ज्वलकारी प्रातस्मरणीय महानुभाव के वीरचरित्र का प्रचार इस आत्मविस्मृत देश में कुछ भी हो, तथा सहृदय पाठकों का कुछ भी मनोरञ्जन हो सके, तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूंगा॥

इस नाटक को पहिले मित्रवर बाबू जगन्नाथदास बी० ए० (रत्नाकर) ने अपने "साहित्यसुधानिधि" मासिक पत्र में छापना आरम्भ किया था तथा इसके संशोधन आदि में बहुत कुछ सहायता दी थी, परन्तु हिन्दीरसिकों के अभाव से उक्त मासिक पत्र बहुत शीघ्र बन्द हो गया और ग्रन्थ अधूराही रह

गया, परन्तु फिर पण्डित जगन्नाथ मेहता और बाबू श्याम सुन्दर दास बी० ए० के उत्साह से यह पूरा हुआ और मुझे आप सज्जनों को भेट करने का अवसर प्राप्त हुआ, अतएव मैं अपने इन मित्रों को हृदय से धन्यवाद देता हूं ॥

मित्रवर कुंवर योधसिंह मेहता उदयपुर निवासी ने मुझे बहुत सी ऐतिहासिक घटनाओं तथा कविता संग्रह में सहायता दी और उत्साहित किया इसलिये मैं उन्हें भी धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता ॥

इस ग्रन्थ के लिखने में मुझे टाड साहिब के "राजस्थान," पूज्य भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र जी के "उदयपुरोदय", कुंवर योधसिंह मेहता के "मेवार का संक्षिप्त इतिहास," मुन्शी देवी प्रसाद मुन्सिफ़ जोधपुर के "महाराणा प्रतापसिंह के जीवनचरित्र," तथा कवि गणपतिराम राजाराम के गुजराती "प्रताप नाटक" से बहुत कुछ सहायता मिली है इसलिये मैं हृदय से इन ग्रन्थकारों को धन्यवाद देता हूं ॥

मेरी बड़ी इच्छा है कि मैं भारतवर्ष के गौरव स्वरूप प्रसिद्ध व्यक्तियों के चरित्र, किसीको नाटक, किसीको उपन्यास और किसीको इतिहास स्वरूप में यथावकाश अपने पाठकों की भेट करूं, परन्तु यह इच्छा पूरी करनी उन्हीं सहृदय पाठकों के हाथ है, यदि आपलोगों से यथोचित उत्साह मिलेगा

और मुझे यह निश्चय होगा कि मेरा लेख आपको रुचिकर हुआ, तो मैं शीघ्र ही फिर आपकी सेवा में, परम प्रसिद्ध भगवद्भक्ति परायणा मीराबाई का नाटक तथा जीवनचरित्र (जिसे मैंने बहुत परिश्रम और खोज से संग्रह किया है) लेकर फिर उपस्थित होऊंगा ॥

अन्त में मेरी यह प्रार्थना है कि विज्ञ महाशयों की दृष्टि में जो त्रुटि इस नाटक में दिखाई दें कृपा कर उनसे मुझे मित्रभाव से अवश्य सूचित करें जिसमें यदि उचित हो तो दूसरे संस्करण में सधन्यवाद वह त्रुटियें दूर कर दी जांय॥

काशी चौखम्भा
श्रीगिरिधर जन्मोत्सव
संवत १९५४ मि०पौष कृष्ण ३ } हिन्दीरसिकों का सेवक
श्रीराधाकृष्ण दास

ता: १२ दिसम्बर सन १८९० ई०
1890

श्रीहरिः

भूमिका

—:0:—

महाराणा उदयसिंह संवत १५९७ [१५३९-४० ई०] में चित्तौर मेवाड़ की राज्यगद्दी पर बैठे अकबर ने बड़ी धूमधाम से धावा किया परन्तु हार खाकर लौट आया। कुछ दिन पीछे मेवार में आपस की फूट देखकर अकबर को अवसर मिला और चित्तौर पर फिर धावा किया। उदयसिंह अपनी जान लेकर भागे परन्तु राजपूत सरदारों ने अपना प्राण रहते चित्तौर शत्रुओं को न दिया। घोर युद्ध हुआ जयमल और पुत्ता ने बड़ी वीरता से लड़ाई की। अन्त में मेवार की राज्यलक्ष्मी भाग्यवान अकबर के हाथ आई। इस लड़ाई में तीस हज़ार राजपूत वीर काम आये और बहुत सी स्त्रियां भी लड़कर मारी गयीं शेष जो रह गयी थीं उन्होंने "जहरव्रत" किया अर्थात् जलकर अपनी पवित्रता को बचाया अकबर ने चित्तौर दखल किया इसका पूरा वृत्तान्त फिर कभी निवेदन करेंगे॥

उदयसिंह भागकर पिपली राज्य के जङ्गलों में गोहिल जाति की सहायता में रहने लगे। वहां से अरावली की घाटी में आये, जहां कि बाप्पा रावल भी रहे थे; उन्होंने इस स्थान पर अपने राजत्व काल में एक झील बनवाई थी जिसका नाम उदय सागर है। अब एक छोटा सा महल बनवाया और फिर तो उस के आसपास और भी इमारतें बन गयीं, और वह एक छोटा सा नगर हो गया इसका नाम उदयपुर रक्खा जो कि अब तक मेवार राजवंश की राजधानी है॥

चित्तौर जाने के चार वर्ष पीछे ४२ वर्ष की अवस्था में उदय-

सिंह ने संसार छोड़ा। उन्हें पचीस बेटे थे। मरती समय उदयसिंह ने छोटे बेटे को कुल की प्रथा के प्रतिकूल अपना उत्तराधिकारी बनाया। जगमल गद्दी पर बैठ गया परन्तु यह बात मेवार के सरदारों को बहुत ही बुरी लगी और उन लोगों ने शीघ्र ही उसे उतार कर महाराणा प्रतापसिंह को गद्दी पर बैठाया॥

प्रतापसिंह का जन्म जेठ सुदी १३ संवत १५९६ को हुआ था और मिती फागुन सुदी १५ संवत १६१८ को गांव गोघूंदे में गद्दी पर बैठे थे॥

प्रतापसिंह राज्याधिकारी तो हुए परन्तु न तो उनके पास कुछ विशेष राजसी ठाठ और न कोई दृढ़ क़िला रहा। प्रतापसिंह वीर पुरुष थे उत्साह से हृदय भरा हुआ था, भीतर भीतर चित्तौर मुसल्मानों से छीनकर अपने कुल का गौरव पुनः स्थापन करने की अग्नि सुलग रही थी। यद्यपि सरदार लोग लड़ाई में हारते हारते टूट गये थे और उनका जी छोटा हो गया था परन्तु इनकी दृढ़ता, वीरता, और उच्चाभिलाष देखकर फिर सभों को साहस हुआ, फिर सब कमर कस कर खड़े हुए, प्रतापसिंह ने तनिक भी परवा न की कि अकबर ऐसे बादशाह से लड़ने के कोई सामान ठीक न थे परन्तु उनका हृदय स्वाधीनता के सुस्वादु फल चखने के उमङ्ग से भरा हुआ था उन्होंने यह सोच कर कि जैसे हमारे पूर्वजों ने इस चित्तौर की रक्षा की है और अपने शत्रुओं को इसी दुर्ग में क़ैद किया है क्या हम वैसा न कर सकेंगे, अकबर की सेना और सामान को तुच्छ ज्ञान किया॥

जिस समय प्रतापसिंह अकबर से लड़ने के लिए सन्नद्ध हो रहे थे उस समय अकबर ऐसे उपायों में लग रहा था, जिनको सुनकर प्रतापसिंह अत्यन्त ही दुःखित हुए अर्थात् उनके जाति भाई तथा सम्बन्धीगण अकबर के साथी हो रहे थे॥

मारवाड़, बीकानेर, आमेर, और बूंदी (जो कि पहिले प्रताप के साथ थे) अकबर के पक्षपाती हुए, यहां तक कि प्रतापसिंह का सगा छोटा भाई (सक्ता जी) सगर जी भी उनको छोड़कर बादशाह से जा मिला और इसके बदले में उसे उसके पूर्वजों की राजधानी चित्तौर का क़िला दिया गया और राणा की पदवी से भूषित किया गया ॥

ज्यों ज्यों उनके विरुद्ध सामान बढ़ते जाते थे त्यों त्यों प्रताप का उत्साह और साहस भी बढ़ता जाता था उन्होंने अपनी जननी के दूध की सौगन्ध खाई कि जैसे होगा अपनी मातृभूमि का उद्धार करेंहीगे। अकेले निःसहाय प्रतापसिंह, ऐसे प्रतापी शत्रु के साथ २५ वर्ष तक महान पराक्रम के साथ लड़ते रहे और अन्त में एक प्रकार सफल मनोर्थ भी हुए ॥

महाराज मानसिंह गुजरात विजय करके लौटते हुए उदयपुर के रास्ते आये, प्रतापसिंह ने उनका बड़ा आतिथ्य सत्कार किया परन्तु उनके साथ खाने में शरीक न हुए, यही जड़ लड़ाई आरम्भ होने की हुई ॥

मानसिंह के दिल्ली आने पर, बादशाह ने राणा पर क्रुद्ध होकर मानसिंह के साथ मिती चैत्र सुदी ५ संवत १६३३ को पांच सहस्र सेना भेजी, इस सेना के साथ आसिफ़खां मीरबख़्शी, ग़ाज़ीखां, सैयद अहमद, सैयद हाशिम, राय लूनकरण आदि सरदार भी थे। टाड साहब ने लिखा है कि इस लड़ाई में शाहज़ादा सलीम भी आये थे परन्तु यह भ्रम है, शाहज़ादा सलीम उस समय केवल ७ वर्ष के थे ॥

यह लड़ाई हल्दी घाटी की लड़ाई के नाम से प्रसिद्ध है ॥

ग्वालियर के राजा रामसिंह का एकलौता बेटा इसी लड़ाई में मारा गया, परन्तु इससे उक्त राजा दुखी न होकर और भी

उत्साह के साथ लड़े तथा काम आये, और ग्वालियर के राज-सिंहासन को अनाथ छोड़ गये ॥

राणा ने अपने घोड़े चेतक को मानसिंह के हाथी पर कुदा कर एक बरछी मारी, परन्तु वह वार खाली गया, हौदे को तोड़ कर बरछी महावत को लगी और महावत मारा गया। फिर तो बादशाही फ़ौज इनपर टूट पड़ी और समीप था कि राणा मारे जाते, परन्तु स्वामिभक्त झाला मानसिंह राणा के छत्र और झण्डे को लेकर एक ओर भागे, मुसल्मानों ने समझा कि राणा उधर ही भागे जाते हैं, सब उसी ओर झुक पड़े और इधर अवसर पा, राणा निकल गये, झाला मानसिंह अपने सब साथियों के साथ वहीं खेत रहे और ऐसी वीरता के साथ अपने स्वामी का प्राण बचाया। राणा ने इसके पलटे में उक्त झालाराज के वँशधरों को अपने दाहिनी ओर स्थान दिया, और आज्ञा दी कि ये लोग महल तक नक़ारा बजाते अपने छत्र और झंडा के साथ आया करें॥

राणा को भागते हुए पहिचान कर दो मुग़लों ने उनका पीछा किया, परन्तु एक बरसाती नदी बीच में आ गई और राणा का घोड़ा चेतक बहुत घायल होने पर भी अपने स्वामी को लेकर नदी फांद गया। इधर इस असहायावस्था में राणा को देखकर उनके भाई सक्ता जी का भी भ्रातृस्नेह उमड़ आया और उन्होंने प्राचीन वैर को भुलाकर उनका पीछा किया, और जिस समय दोनों मुग़ल नदी उतरने के उद्योग में थे उनको ललकारा और दोनों को लड़कर मार गिराया तथा इस भांति राणा दूसरी जानजोखों से बचे ॥

चेतक ज्यों ही राणा उससे उतरे गिरकर मर गया, राणा ने उसके मरने पर बड़ा शोक किया और उस स्थान पर एक चबूतरा बनवाया तथा प्राय: स्वयं वहां जाया करते ॥

टाड साहिब के लेखानुसार यह लड़ाई मिती सावन वदी ७ संवत १६३३ को हुई थी और इसमें ५०० मनुष्य राणा के तथा ३५० तोमर (तुंवर) राजा रामसिंह ग्वालियर वाले के काम आये ॥

"अकबर नामा" में लिखा है कि बादशाही फ़ौज उखड़ चुकी थी और निकट था कि भाग खड़ी होती, परन्तु महतरखां ने चालाकी की, चंदौल की फ़ौज को दौड़ाये हुए आया और यह बात प्रसिद्ध की कि बादशाह आ पहुँचे, बस फिर सभों को साहस हो गया और राणा की सेना हताश होकर लौट पड़ी ॥

मुंशी देवी प्रसाद मुन्सिफ़ जोधपुर ने महाराणा प्रतापसिंह का जीवन चरित्र बहुत खोज के साथ लिखा है। हम आगे का वृत्तांत अविकल उन्हीं के ग्रन्थ से धन्यवाद पूर्वक उद्धृत करते हैं ॥

"इस लड़ाई के पीछे महाराणा ने कुंभलमेर के क़िले में अपनी गद्दी जमाई जो उदयपुर से पच्छिम की तरफ़ पहाड़ों में परगने गोढवाड़ के ऊपर है और मैदान का तमाम मुल्क जिस को बहुत करके मेवाड़ कहते हैं उजाड़ दिया और वहां के आदमियों को पहाड़ों में बुलाकर अजमेर मालवे और गुजरात के रास्तों पर लूट मार शुरू कर दी जिससे नाज और दूसरी व्योपार की चीजों का आना जाना बंद हो गया और बादशाही लश्कर पर बड़ी तकलीफ़ गुज़रने लगी आसिफ़खां और मानसिँह से कुछ बंदोबस्त न हो सका और इसकी शिकायत बादशाह के कानों तक पहुंची मगर बादशाह का दिल उस वक़्त बंगाले की तरफ़ लगा हुआ था क्योंकि वहां उनकी फ़ौज पठानों से लड़ रही थी और वे खुद भी उसकी मदद के वास्ते सावन वदी २ को बंगाले की तरफ़ रवाने हुए खुशनसीबी से उसी

मिती को कि पच्चीसवां दिन गोघूंदे की फ़तह से था बंगाला फ़तह हो गया और बादशाह यह ख़बर सुन कर रास्ते से राजधानी में लौट आये वहां से ज़ाहिर में तो ज़ियारत और असल में मेवाड़ के लशकर को मदद पहुंचाने के लिये रवाने होकर आसोज सुदी ७ को अजमेर पहुंचे वहां सुना कि गोघूंदे के लशकर में रास्तों की तकलीफ़ों से नाज कम आता है और कुंवर मानसिंह ने राणा का मुल्क लूटने की मनाई कर रखी है इस सबब से गोघूंदे में बड़ी तकलीफ़ है इसके सिवाय कुंवर और आसिफ़ख़ां में अनबन भी है इसपर बादशाह ने लशकर के अमीरों के नाम छड़ी सवारो से हाज़िर होने का हुक्म भेजा जब वे हाज़िर हुए तो कुंवर और आसिफ़ख़ां की ड्योढ़ी कई दिन तक बंद रखी और फिर क़सूर माफ़ करके रूबरू बुलाया ॥

इस अवसर में महाराणा ने सिरोही के राव सुरतानदेवड़ा, जालौर के ख़ान ताजख़ां और ईडर के राजा नारायण दास को भी अपने शामिल कर लिया और यह सब मिलकर अरवली पहाड़ों के दोनों तरफ़ गुजरात के रास्तों पर लूट मार और फ़साद करने लगे बादशाह ने जालौर और सिरोही के ऊपर तरसूख़ां और रायसिंह को भेजा और वे दोनों रईस डरकर अजमेर में बादशाह के पास हाज़िर हो गये तब बादशाह ने तरसूख़ां को पाटन की हुकूमत पर भेजा और रायसिंह को नांदोत में रहने का हुक्म दिया जिससे महाराणा के गुजरात में आने जाने का रास्ता बंद हो गया ॥

अब बादशाह ने कातिक बदी ६ को अजमेर से गोघूंदे की तरफ़ कूंच किया और फ़ौज को तो दो दिन पहिले से बकतर पाखर पहिना दिये थे गोघूंदे पहुंचकर कुतबुद्दीन राजा भगवंत दास और कुंवर मानसिंह को तो पहाड़ों में महाराणा के

ऊपर और क़लीचख़ां वग़ैरः को ईडर की तरफ़ भेजा और इनके साथ ही हाजियों के क़ाफ़िले यानी संग को भी हल्दी-दर के घाटी से गुजरात की तरफ़ रवाने किया और मेवाड़ की पहाड़ों में होकर ईडर पहुंचा महाराणा और नारायणदास लूटने को क़ाबू न पाकर एक तरफ़ हो गये मगर ईडर कातिक वदी १२ को फ़तह हो गया॥

फिर बादशाह ग़ाज़ीख़ां वगैरः अमीरों को मोही में जो गोघूंदे से २० कोस है और अब्दुलरहमान वगैरः को मदारिये में छोड़कर पूस सुदी ८ को बांसवाड़े के रास्ते से मालवे को तरफ़ रवाने हुए कुतुबुद्दीनख़ां और राजा भगवंतदास जो हाजियों को गुजरात की सरहद तक पहुंचा चुके थे बग़ैर हुक्म आकर शामिल हो गये मगर उनपर ख़फ़गी हुई और कुछ दिन तक दरबार बंद रहा॥

बादशाह उदयपुर होकर बांसवाड़े को रवाने हुए उदयपुर में शाह फ़ख़रुद्दीन और जगन्नाथ को उदयपुर के दरे यानी देबारी के घाटी में राजा भगवंतदास और सैयद अब्दुल्लाख़ां को छोड़ कर लशकर की अफ़सरी कुतुबुद्दीनख़ां की जगह आसिफ़ख़ां को दे गये और बांसवाड़े होकर कि जहां डुंगरपुर और बांसवाड़े को रावल परताप और आसकरन हाज़िर हो गये थे देपालपुर में पहुंचे और वहां कुछ दिन रहे॥

बादशाह का गोघूंदे की तरफ़ आने और पहाड़ों में होकर मालवे की तरफ़ जाने का एक मतलब यह भी था कि किसी तरह महाराणा भी दूसरे रईसों के माफ़िक़ उनके पास हाज़िर हो जावें तो यह जात्रा सुफल हो जावे मगर महाराणा तो ऐसी पट्टी पढ़े ही नहीं थे उनको सब तरह से अपना नुक़सान करना मंज़ूर था लेकिन बादशाह को सिर झुकाना हरगिज़

मंजूर नहीं था और तो क्या एक भाट जिसको महाराणा ने अपनी पगड़ी दी थी जब बादशाह से मुजरा करने को गया तो पगड़ी उतार कर हाथ में ले ली और नंगे सिर मुजरा किया बादशाह ने सबब पूछा तो कहा कि यह पगड़ी राणा प्रतापसिंह को है जिसने कभी किसी हिन्दू मुसलमान को सिर नहीं झुकाया है इसलिये मैंने भी उसका अदब रखा ॥

बादशाह कम से कम ६ महीने के क़रीब महाराणा के मुल्क में और उनके आस पास रहे और उन्होंने महाराणा के तंग करने में भी कसर नहीं रखी तो भी महाराणा ने कुछ परवाह न की और सलाम तक उनको नहीं कहला कर भेजा बल्कि हर तरह से उनको दिक़ करते रहे और जब देखा कि बादशाह उनके मुल्क से निकल गये पहाड़ों से उतर कर बादशाही थानों पर चढ़ाई करना शुरू किया और मेवाड़ की तरफ़ से आगरे का और बादशाह के लश्कर का रस्ता बंद कर दिया जैसा कि मुल्ला अब्दुलक़ादिर लिखता है कि मैं उस वक़्त बीमारी के सबब से वतन में रह गया था और बांसवाड़े से लश्कर में जाना चाहता मगर हिंडोन में अब्दुल्लाख़ां ने वह रास्ता बंद और भयानक बताकर मुझको लौटाया तब मैं ग्वालियर सारंगपुर और उज्जैन की रास्ते से देपालपुर में जाकर बादशाह के पास हाज़िर हुआ ॥

इस अरसे में सुरतानदेवड़ा भी बादशाह के लश्कर से भाग कर सिरोही में जा पहुंचा था और ईडर का राव नारायण दास भी फ़िसाद करने लगा था बादशाह ने यह ख़बरें सुनकर माघ सुदी ७ को फिर राजा भगवंतदास, कुंवर मानसिंह, मिरज़ाख़ां और क़ासिम ख़ां वग़ैरह को गोघूंदे की तरफ़ भेजा और सुरतान देवड़े के वास्ते राय रायसिंह को और नारायण दास की बाबत

आसिफ़खां को लिखा कि राय रायसिंह ने तो सिरोही और आबूगढ़ सुरतान से छीन लिया और आसिफ़खां के ऊपर नारायण दास को महाराणा ने मदद देकर भेजा वह ईडर से दस १० कोस पर पहुंचकर बादशाही थाने ईडर पर छापा मारना चाहता था कि आसिफ़खां ने फागुन सुदी ६ को सात कोस आगे जाकर मुकाबिला किया और लड़ाई में हराकर भगा दिया लेकिन राजा भगवंत दास और मिरज़ाखां वग़ैर: से कुछ बंदोबस्त महाराणा का न हो सका वे उसी तरह थानों के ऊपर दौड़ते रहे बादशाही अमीर उनके पकड़ने की बहुत कोशिश करते थे मगर उन तक पहुंच भी नहीं सकते थे और जब कि वे एक पहाड़ को महाराणा का ठहरना सुनकर घेरते थे महाराणा दूसरे पहाड़ से निकलकर छापा मार जाते थे वे कभी एक जगह या क़िले में जमकर नहीं बैठते थे कि इसमें बाज़े वक़्त बहुत मुशकिल पड़ जाती है हमेशा इधर उधर बादशाही अमीरों की भाल में फिरा करते थे इस दौड़ धूप का यह फल लगा कि उदयपुर और गोघूंदे से बादशाही थाने उठ गये और मोही का थानेदार मुजाहद बेग मारा गया ॥

बादशाह का दुबारा अजमेर में आना

अकबर बादशाह कातिक वदी १२ को मामूल के माफ़िक़ फिर अजमेर आये और अगली फ़ौज से मेवाड़ में कुछ काम निकला हुआ न देखकर कातिक सुदी १५ को मेड़ते से फिर एक फ़ौज महाराणा के ऊपर भेजी उसमें अफ़सर तो वही राजा भगवंतदास, कुंवर मानसिंह, पायंदाखां, मुग़ल सैयद क़ासिम सैयद हाशम, सैयद राजू असदतुर्कमान और गजराचौहान वग़ैर:

थे, लेकिन बख़्शी आसिफ़ख़ां की जगह शहबाज़ख़ां को किया और इख़्तियार भी कुल फ़ौज का उसीको दिया यह बड़ा चालाक अफ़सर था इसने पहले तो हाजियों के क़ाफ़िले को जिसके साथ बहुत सा रुपया मक्के को भेजा गया था महाराणा की सरहद से पार उतार दिया और फिर बादशाही थाने देखकर सरहद के ज़ाबते के लिये बादशाह से और मदद मांगी बादशाह ने शेख़ इब्राहीम फ़तहपुरी को कुछ फ़ौज देकर भेजा उस के पहुंचने पर शहबाज़ख़ां ने महाराणा से कुंभलगढ़ ले लेने का इरादा करके राजा भगवंतदास और कुंवर मानसिंह को तो तरफ़दारी के वहम से बादशाह के पास जाने की सीख दे दी और फिर शरीफ़ख़ां, ग़ाज़ीख़ां और मिरज़ाख़ां वगैरः के साथ जाकर उस क़िले को घेरा मिती बैसाख* बदी १२ संवत १६३५ को महाराणा ने अंदर से लड़ाई की मगर १ बड़ी तोप के फट जाने से क़िले का सामान जल गया महाराणा लाचार क़िला छोड़कर बांसवाड़े की तरफ़ निकल गये मगर उनके नामी रजपूत पहिले क़िले के दरवाज़े पर लड़े और फिर मंदिरों और घरों के आगे बहादुरी से मुक़ाबिला करके काम आये शहबाज़ख़ां ग़ाज़ीख़ां को क़िले में छोड़कर महाराणा के पीछे रवाने हुआ दूसरे दिन दोपहर को गोघूंदे में और आधीरात को उदयपुर में अमल किया और बहुतसा माल लूटा॥

मूंतानेणसी की ख्यात में लिखा है कि अकबर की फ़ौज ने संवत १६३२ में कूंभलमेर फ़तह किया सोनगराभान अखेरा

---

* मेवाड़ में असाढ़ बदी १५ संवत १६३५ मानते हैं हमने बैसाख बदी १२ अकबरनामे में लिखी हुई तारीख़ २४ फ़रवरदीन से हिसाब करके लिखी है इससे २ महीने का फरक़ आता है मगर फ़रवरदीन महीना कभी असाढ़ में नहीं आता चैत बैसाख में ही आता है जब कि सूरज मेष राशि पर हो शायद ऐसा हुआ हो कि लड़ाई बैसाख बदी १२ को शुरू हुई और क़िला असाढ़ बदी १५ को फ़तह हुआ॥

जीत और कई चाकर राणा जी के मारे गये मालूम नहीं कि यह दो बरस की ग़लती संवत में क्यों है ॥

महाराणा शहबाज़खां को पहाड़ों में बहुत लिये लिये फिरे मगर हाथ नहीं आये आखिर उसने थककर पीछा छोड़ दिया और पता लगाकर उनका डेरा लूट लिया राय सुरजनहाड़ा का बेटा दूदा जो बादशाह से बाग़ी रहा करता था और बरस दिन पहले बादशाही लश्कर से लड़कर महाराणा के पास चला आया था शहबाज़खां के पास हाज़िर होगया वह उसी को लेकर पंजाब में बादशाह के पास गया आषाढ़ सुदी १२ संवत १६३५ को उसका मुजरा हुआ बादशाह ने उसको अरज़ से दूदा के क़सूर बख्श दिये ॥

शहबाज़खां के जाने पर महाराणा बांसवाड़े की तरफ़ से छप्पन के पहाड़ों में आये और बादशाही थानों को काटने लगे बादशाह ने फिर पौष बदी १४ संवत् ३५ को शहबाज़खां और ग़ाज़ीखां को भेज मुहम्मदहुसेन शेखतैमूरबदख्शी और मीरज़ादा अलीखां और बहुत से अमीरों को साथ किया महाराणा फिर पहाड़ों के ऊपर चढ़गये शहबाज़खां फिर दो तीन महीने तक मेवाड़ में फिरा और थानों में हर जगह कारगुज़ार आदमी रख कर पीछे चला गया और जेठ सुदी १४ संवत् १६३६ को बादशाह के पास पहुंचा और महाराणा को फिर अपने काम करने का मौक़ा मिलगया जिसमें कातिक बदी १३ संवत् १६३६ को बादशाह खुद अजमेर में आये और सुदी १२ को पीछे जाने लगे तब मुक़ाम सांभर से फिर शहबाज़खां को सूबे अजमेर का बन्दोबस्त क़ायम रखने के वास्ते छोड़ गये इससे पाया जाता है कि महाराणा ने मेवाड़ के सिवाय और जगह भी सूबे अजमेर में दस्तन्दाज़ी की थी ॥

शहबाज़खां ने फिर महाराणा का पीछा लिया इस दफ़े उनको बहुत मुश्किल पड़ी खाना खाने तक की फ़ुरसत नहीं मिलती थी जिधर जाते थे दुश्मन पीछा दबाये चला आता था एक दिन ऐसा हुआ कि पांच दफ़े खाना छोड़कर भागना पड़ा ऐसा विखा कभी किसी को नहीं हुआ होगा कि दुश्मन हर दम तलवार लिये हुये सिर पर खड़ा मिले और विखे का भुगतना भी महाराणा प्रतापसिंह का ही काम था कि जो ऐसी २ कड़ी झेलते थे बड़े लोगों ने जो यह वचन कहा है कि सूरबीर उसको कहना चाहिये कि जिसके तेवर हार में भी न बदलें सो यह महाराणा प्रतापसिंह में अच्छी तरह से देखा जाता था कि हार पर हार होती थी और ज़मीन सब जाती रही थी तो भी लड़ने मरने ही पर तैयार रहते थे और दीन वचन मुंह से कभी नहीं निकालते थे टाड राजस्थान में लिखा है कि एक दफ़े उनकी बेटी ने अपने हिस्से की रोटी आधी तो खा गई थी और आधी दूसरी टक के वास्ते रख छोड़ी थी कि एक बिल्ली आई और उसको खा गई जिसके वास्ते वह लड़की चिल्ला कर रोई यह दुःख महाराणा से नहीं सहा गया और उन्होंने अकबर को लिखा कि मेरी तकलीफ़ कम करो अकबर इससे बड़ी शेखी में आ गया और दरबार करके यह लिखावट सब को दिखाई बीकानेर के राजा रायसिंह के भाई पृथ्वीराज * ने

* पृथ्वीराज के विषय में "भक्तमाल" में नाभा जी लिखते हैं :—

नर देव उभै भाषा निपुन पृथ्वीराज कविराज हुव ।
सवैया गीत श्लोक बेलि दोहा गुन नव रस ॥
पिंगल काव्य प्रमाण विविध विधि गायो हरि जस ।
परिदुख विदुख सलाघ्य वचन रसना जु विचारै ।
अर्थ विचित्रनि मोल सबै सागर उद्धारै ॥
रुक्मिणी लता बर्णन अनूप वागीश वदन कल्यान सुव ।
नर देव उभै भाषा—१४०

कहा कि यह किसीने राणा के नाम पर बट्टा लगाने के वास्ते जालसाज़ी की है राणा को मैं जानता हूं वह कभी ऐसा हर्फ़ नहीं लिखेगा और फिर पृथ्वीराज ने महाराणा को इस हरकत से रोकने के वास्ते बहुत से चमतकारी दोहे बनाकर भेजे जिन के सुनने से महाराणा को १०००० घोड़ों का बल हो गया सो हमारे समझ में निरी कहानी मालूम होती है क्योंकि अकबर बादशाह की किसी तवारीख़ से भी नहीं पाया जाता है कि महाराणा ने कभी कोई ऐसी दरख्वास्त बादशाह से की हो जो कि होती तो अबुलफ़ज़ल जिसने ज़रा ज़रा सी बात को बना बना कर लिखा है इसको राई का पहाड़ बनाकर लिखता मगर कहीं अकबरनामे में ऐसा ज़िक्र नहीं है जिससे यह बात साफ़ बनावट की मालूम होती है हां यह सही है कि जब शहबाज़ख़ां का पीछा लेने से महाराणा के पांव उखड़ गये और उनको कहीं आस पास ठहरने के लिये जगह नहीं मिली

टीका। प्रियादास जी लिखित:— मारवार देश बीकानेर को नरेश बड़ो पृथ्विराज नाम भक्तिराज कविराज है। सेवा अनुराग अरु नियम वैराग्य ऐसो रानी पहिचानी नाहिं मानो देखौ आज है। गयो विदेश तहां मानसी प्रवेश कियो हियो नहीं छुवैं कैसे सरे मन काज है। बीते दिन तीन प्रभ मन्दिर न दीठ परै पाछे हरि देखि भयो सुख को समाज है। ॥ ५३० ॥ लिखि कैं पठायो देश सुन्दर स्वदेश यह मन्दिर न देख हरि बीते दिन तीन है। लिख्यो आयो सांच बांचि अतिही प्रसन्न भये लगे राज बैठे प्रभु बाहर प्रवीन है। सुनी और एक यों प्रतिज्ञा करी हिये धरी मथुरा शरीर त्यागि करै रस लीन हैं। पृथवीपति जानि कै मुहीम दई काबिल को बल अधिकाई नहीं काल के अधीन हैं ॥ ५३१ ॥ जीवन अवधि रहे निपट अलप दिन कलप समान बीति पल न दिखात है। आगम जनाइ दियो याहि इन्हैं सांचो कियो लियो भक्ति भाव जाकै छायो गात गात है। चल्यो चढि सांड़नी पै लई मधुपुरी आनि करिकै स्नान प्रान तजे सुनी बात है। जय जय ध्वनि भई गई व्यापि चहुं ओर चही भूपति चकोर जस चन्द दिन रात है ॥ ५३२ ॥

बाबू शिवसिंह और डाक्टर ग्रियर्सन साहब ने भी अपने ग्रंथों में पृथ्वीराज का वर्णन किया है ॥

श्री राधाकृष्णदास

तो वे सूंधा के पहाड़ों में जो आबू से १२ कोस पच्छिम में है जहां पहिले राणा मोकलसी जी भी विखे में रह चुके थे चले गये वहां देवड़ राजपूतों की बस्ती है उन्होंने महाराणा की बहुत आवभगती की और लोयाणे ठाकुर रायधवल ने जो सब देवड़ों में पाटवी था अपने पास कोई अच्छी चीज़ उनकी नज़र के लायक़ न देखकर अपनी बेटी उनको व्याह दी और पहाड़ के ऊपर उनको बड़ी खातिर और हिफ़ाज़त से रखा महाराणा ने वहां बाग़ लगवाया और बावड़ी बनवाई जो अब तक मौजूद है ॥

सूंधा पहाड़ पर रहने से मेवाड़ में फिर कुछ पता महाराणा का शहबाज़ख़ां को नहीं लगा और उसी अरसे में बादशाह का हुक्म उसके नाम पूरब में जाने के वास्ते आया जहां और बिहार के अमीर बाग़ी होकर फसाद कर रहे थे शहबाज़ख़ां मेवाड़ से रवाने होकर आषाढ़ सुदी ८ संवत १६३७ (मेवाड़ी १६३६) को फ़तहपुर में बादशाह के पास पहुंचा महाराणा उसका जाना सुनकर अपने मुल्क में आने के वास्ते रायधवल से रुख़सत हुए उस वक़्त रायधवल को खिदमतों का इनाम देने के वास्ते उनके पास कुछ न था तो भी उसको राणा का खिताब देकर अपने बराबर कर लिया ॥

बादशाह ने शहबाज़ख़ां की जगह रुसतमख़ां को अजमेर का सूबेदार करके भेजा था वह चार महीने में ही कछवाहों के मुक़ाबिले में मारा गया उसकी जगह मिरज़ाख़ां * सूबेदार होकर आया जो बाद को ख़ानख़ाना कहलाया मालूम होता है कि यह महाराणा का दोस्त था और महाराणा की तारीफ़ में इसके बनाये हुए दोहे बहुत मशहूर हैं इसने महाराणा से कुछ छेड़ नहीं की जिससे उसका जमाव अपने मुल्क में फिर हो गया और वे धीरे धीरे आगे भी बढ़ने लगे ॥

---

* अबदुल रहीम ख़ां ख़ानख़ाना ? थी था:

मूतानैणसीने लिखा है कि बैशाख सुदी संवत ३८-३९ में महाराणा ने शेरपुरे का थाना मारा यहां मिरज़ाखां की बेगम पकड़ी गयी मगर महाराणा ने बहुत इज़्ज़त और हुरमत के साथ पीछे मिरज़ाखां के पास भेज दी ॥

राज प्रशस्ती में लिखा है कि कुंवर अमरसिंह मिरज़ाखां के क़बीलों को पकड़ लाया था जब कि बादशाह उसको गोघूंदे में छोड़ गये थे और महाराणा ने फ़ौरन उनको मिरज़ाखां के पास पहुंचा दिया ॥

ख़ैर कभी हुआ हो यह काम बड़ी भलाई का था जो महाराणा की तरफ़ से अपने दुश्मनों के साथ हुआ और शायद इसी इहसान के बदले में ख़ानख़ाना ने वे दोहे महाराणा की तारीफ़ में बनाये हों ॥

मिरज़ाखां संवत १६३८ के पौष तक अजमेर के सूबे में रहा क्योंकि माघ सुदी ६ को जब कि बादशाह क़ाबुल से फ़तिहपुर में पीछे आये थे अकबरनामे में उसका नाम दरबारियों में लिखा है और उस दिन नगर चैन में बख़्शियों ने बादशाह के हुक्म से उसको शहबाज़ख़ां के ऊपर खड़ा किया था इससे शहबाज़ख़ां ने बुरा माना और अदूल हुक्मी करने को तैयार हुआ बादशाह ने ख़फ़ा होकर उसको रायसाल दरबारी के पहरे में बिठा दिया ॥

इससे मालूम होता है कि मिरज़ाखां माह में या कुछ पहिले अजमेर से चला गया था और फिर इस काम पर नहीं आया ॥

मिरज़ाखां के जाने से महाराणा को और सुभीता हुआ वे फिर अपना मुल्क दबाने लगे हरएक थाने पर लड़ाई शुरू हुई रास्ते बंद हो गये फिर बादशाह तक पुकार पहुंची बादशाह इस दफ़े जगन्नाथ कछवाहे को अफ़सरी में फ़ौज तय्यार की

बख्शोगोरो मिरज़ा जाफ़र बेग को दो फागुन बदो १ को यह लोग रवाने हुए सैयद राजू को मांडल में छोड़ कर महाराणा के ऊपर गये महाराणा दूसरे घाटी से निकल कर मेवाड़ में आये और कई गांव लूट लिये सैयद राजू लड़ने को गया तब चित्तौर की तरफ़ मुड़े उधर से जगन्नाथ भी आगया मगर राणा जी तो लड़ते मारते पहाड़ों में चले गये और कुछ अरसे पीछे फिर आये यह फिर पीछे पड़े एक दफ़े बहुत ही पास जा पहुंचे थे मगर महाराणा फिर भी हाथ न आये तब यह पता लगाकर उनके क़बीलों के ऊपर गये जो एक विकट जगह पर भीलों को हिफ़ाज़त में थे मगर महाराणा को ख़बर हो गयी और वे उनको भी ले गये ये गुजरात की सरहद तक पीछे गये मगर महाराणा का पता न लगा तब डूंगरपुर के रावल से जुरमाना लेकर लौट आये ॥

ग़रज़ इसी तरह से जगन्नाथ भी दो बरस तक पहाड़ों में भटकता रहा फिर मजाहदबेग को बदली तो बादशाह ने इलाहाबाद के सूबे में करदी और जगन्नाथ भी संवत १६४२ में कश्मीर को चला गया ॥

महाराणा की फ़तह

इस वक़्त से महाराणा के दिन फिरे बादशाह की फिर कोई फ़ौज नहीं आई अकबरनामे में १२ बरस यानी संवत् १६५३ तक महाराणा का ज़िक्र नहीं आता है सिर्फ़ उस संवत् में उन के मरने की ख़बर लिखी है इतनी मुद्दत तक बादशाह के चुप रहने और फ़ौज नहीं भेजने का यह सबब था कि संवत् १६४१ से पंजाब में रहते थे और उनका ध्यान ज़ियादातर उत्तर और पच्छिम की तरफ़ था क्योंकि तूरान के बादशाह अब्दुलाख़ां उज़बक से बिगाड़ होगया था और अकसर ख़बरें उसके काबुल और

हिन्दुस्तान के ऊपर चढ़ाई करने की उड़ा करती थीं ॥

टाड राजस्थान में लिखा है कि महाराणा के ऊपर तकलीफ़ देखकर उनके पुश्तैनी दीवान भोमाशा का जो जमा और जो दौलत उसके बाप दादों की जोड़ी हुई चली आती थी वह सब उसने महाराणा के नज़र करदी और महाराणा उस रुपये से घोड़ों और राजपूतों की सजाई करके बादशाही लशकर पर जो दवेर में पड़ा था जा पड़े और उसको गाजर मूली की तरह से काटकर भागे हुओं के पीछे आमेट तक गये और उसी गरमा गरमी में कूम्भलमेर के ऊपर हमला करके अब्दुल्ला और उसके लशकर को काटडाला और फिर उसी तरह दुश्मनों के ३२ थाने छीनकर उनको मार भगाया ॥

मेवाड़ की तवारीख़ लिखनेवाले कहते हैं कि एक ही साल यानी संवत् १६४२ की लड़ाई में तमाम मेवाड़ अजमेर चित्तौर और मांडलगढ़ के सिवाय दुबारा फ़तह होगया और हिन्दूपति ने राजा मानसिंह और जगन्नाथ को बदला देने के लिये जो फूले २ फिरते थे कि हमने महाराणा को कैसा ख़राब कर दिया आमेर के ऊपर हमला किया और उसके मालदार शहर मालपुरे को लूटकर ख़ाक में मिला दिया ॥

महाराणा की बाक़ी उमर आराम से गुज़री क्योंकि १२ बरस तक फिर कोई चढ़ाई मुग़लों की नहीं हुई इस मुद्दत में उन्होंने अपने उजड़े मुल्क को संभाला उदयपुर को जो दुश्मनों की चढ़ाइयों से बसते २ रह गया था नये सिरे से बसाया सरदारों को जो विखे में साथ रहे थे बड़ी २ जागीरें दीं और उनके दरजे और कुर्ब ज़ियादे किये ॥

महाराणा का इन्तक़ाल

संवत १६५३ में महाराणा का देहान्त हुआ मिती मालूम नहीं हुई न टाड राजस्थान में देखी गई न मुतानेणसी की ख्यात में है मगर अकबरनामे में लिखा है कि सात तारीख़ बहमन सन् ४१ जलूसी को राणा * कीका का ज़माना ख़तम हो गया उसके अधर्मी बेटे अमरा ने ज़हर खिला दिया और एक कड़ी कमान के खैंचने से भी झटका लगा था सो हिसाब लगाने से यह तारीख़ माह सुदी पंचमी ५ संवत † १६५३ मुताबिक़ से होती है ॥

टाड राजस्थान में महाराणा के मरने का हाल इस तौर पर लिखा है ।

महाराणा की तमाम उमर विपत्ति और लड़ाइयों में गुज़री उनका तमाम बदन ज़ख्मों से चूर था वे ग़म और फ़िक्र के मारे जवानी में ही बूढ़े हो गये थे उनके हाथ पांव रात दिन की दौड़ धूप से ढीले हो गये थे कमज़ोरी से उनको तरह २ की बिमारियां पैदा हुईं । उनके मरने की हालत भी उनकी बहादुरी साबित करती थी उन्होंने अपने वली अहद को क़सम दिलाई कि तू हमेशा दुश्मन से लड़ता रहना और कभी लड़ाई से पीछे मत हटना अमरसिंह ने क़सम खाई और बचन दिया तो भी महाराणा को तसल्ली न हुई क्योंकि वे जानते थे कि मेरा बेटा कभी आज़ादी और विपत्ति की तकलीफ़ों को न सह सकेगा और सबब ऐसा समझने का यह था कि महाराणा और उनके

* अकबर बादशाह महाराणा प्रतापसिंह को राणा कीका कहते थे ॥

† हम लिखने के पीछे हमको उदयपुरी एक मित्र की लिखावट से मालूम हुआ कि महाराणा का देहांत माह सुदी ११ को हुआ ॥

साथियों ने पीछोला झील के किनारे पर कई झोंपड़े डाल रक्खे थे जिनमें वे अपने विखे के दिन तेर करते थे और अंधेरे और मेह में सिर छिपा कर बैठ जाते थे राजकुमार अमरसिंह को यह ध्यान तो रहा नहीं कि झोंपड़ा बहुत नीचा है और उस का एक बांस बाहर को निकला हुआ है और वैसेही निकल खड़े हुये मुडास डांड़े में अटका उसका वैसाही ऐंचते हुए चले गए ॥

धीरे २ महाराणा ने जो अपने बेटे को यह जल्दबाज़ी देखी तो उनको बड़ा रंज हुआ और उन्होंने जान लिया कि यह कभी उन मेहनतों को नहीं झेल सकेगा जो दुश्मनों से लड़ने में आ पड़ती है ॥

हिन्दूपति उस वक्त एक टूटे से झोंपड़े में पड़े थे और उनके सरदार जो बुरे वक्तों में आड़े आये थे सब उनके सिरहाने बैठे थे और उनके दम तोड़ने की हालत को बड़ी लाचारी बेबसी और दुख से देख रहे थे जब बहुत देर हुई तो सलूमर के सरदार ने ठंडी सांस भर कर पूछा कि ऐसी क्या मुश्किल आप को जान पर पड़ी है जो वह निकलती नहीं ॥

महाराणा ने संभाला लेकर जवाब दिया कि मेरी यह तसल्ली करो कि यह मुल्क मेरे पीछे कहीं तुरकों को तो नहीं दे दिया जावेगा मैं उस झोंपड़े वाली कैफ़ियत से अपने बेटे के मिज़ाज का हाल मालूम करके तो यही समझ रहा हूं कि वह इन झोंपड़ों की जगह बड़े बड़े ऊंचे मकान और महल बनावेगा और उनमें आराम से बैठ जावेगा और मेवाड़ का स्वतंत्रपना कि जिसके वास्ते मैंने इतना खून बहाया है उसके हाथ से जाता रहेगा क्या तुम लोग भी उसी के माफ़िक करोगे। सरदारों ने यह सुनकर बापारावल के तख़्त की क़सम खाई

और कहा कि हम राजकुमार की तरफ़ से ज़ामिन होते हैं कि जब तक मेवाड़ की आज़ादी (स्वतंत्रता) दुबारा हासिल नहीं हो जावेगी हम कभी राजकुमार को महल नहीं बनाने देंगे और न आराम से बैठने देंगे ॥

इस बात के सुनने से महाराणा को पूरी तसल्ली हो गई और फिर उनकी जान झट से निकल गई ॥

टाड साहब कहते हैं कि उन मुल्कों के मालिकों को कि जो उथल पुथल से बचे हुए हों सोचना चाहिये कि कितनी बहादुरी और सूरबीरपने का जोश इस राजपूत बादशाह में होगा कि जिसने थोड़ी सी ही फ़ौज और दौलत से ऐसे बड़े शहनशाह का सामना किया जिसका लशकर गिनती में उस दम (मिक़दार) से भी कहीं ज़्यादा था कि जो कभी ईरानी लोग यूनान के ऊपर चढ़ा ले गये थे ॥

अरवली पहाड़ में कोई ऐसी घाटी नहीं है कि जहां महाराणा ने कोई काम बहादुरी का न किया हो जिसमें उनको या तो फ़तह हुई होगी या ऐसी शिकस्त कि जिससे उनकी और शान बढ़गई हो और नाम भी हुआ हो इन लड़ाइयों में से हल्दी घाटी और देवेर की लड़ाई ज़्यादा मशहूर है ॥”

श्रीहरिः

राजस्थान-केशरी

अथवा

महाराणा प्रतापसिंह।

छप्पय।

प्रभु की बातहिं टारि आपुनी बातहिं राखूं।
हरि कों शस्त्र गहाऊं कै निज शस्त्रहिं नाखूं॥
पांडव दलहिं कँपाइ कृष्ण वच टारन भाखूं।
चक्र धारि धावत लखि जीवन फल निज चाखूं॥
इमि दृढ़प्रतिज्ञ लखि बीरवर धाये तुरतहिं चक्र लै।
जय भक्तमानरच्छक सदा जादवपति जय जयति जै॥१॥

(इति नान्दी)

(सूत्रधार का प्रवेश)

सू०। (चारों ओर देख कर) आहो! संसार कैसा परिवर्तन-शील है! क्षण २ पर इसका रूप बदलता रहता है। देखो क्या यह वही भारतभूमि है जिस में एक समय लोग विमानों पर आकाश मार्ग में विचरण करते थे, तपबल से ऋषिगण जिधर जा निकलते थे प्रकाश हो जाता था, विद्या, कला, कौशल प्राणी मात्र में शोभा पाती थी? अवश्य अब वे सब बातें दूर गईं, अब यह भारत वह भारत नहीं है, परन्तु

क्या यह भारत भारत ही नहीं है, अथवा अब इस में कोई शोभा ही नहीं है ? नहीं ऐसा कदापि नहीं, यह भारत वही भारत है, इस में सभी कुछ वर्तमान है परन्तु रूपांतर से, काल के प्रभाव से रूपान्तर अवश्य होगया है परन्तु वही भूमि वही आकाश, वही मनुष्य, वही पशु पक्षी, सब वही हैं। उस समय की शोभा दूसरी थी इस समय की दूसरी-उस समय विमान पर लोग घूमते थे, इस समय रेल रूपी धूम्र यान पर, उस समय योगबल से ऋषिगण घर बैठे त्रिलोक के समाचार जान सकते थे, इस समय टेलीग्राफ़ द्वारा, उस समय सुन्दर रथों पर महारथी शोभायमान थे, इस समय बड़ी २ डाइक्स की फ़िटनें, वेलर की जोड़ियां चौड़ी २ सड़कों की शोभा बढ़ाती हैं, उस समय सोने चान्दी के रत्न जटित पात्र घर के गौरव को बढ़ाते थे, इस समय सुन्दर शीशे के ग्लास रिकाबी आदि स्वच्छता की झलक दिखाते हैं, उस समय सोने चांदी के सिक्कों के रखने का स्थान न था, इस समय काग़ज़ के सिक्के उड़ते दिखाई देते हैं, उस समय गली २ में वेदध्वनि प्रतिध्वनित होती थी, इस समय क़दम २ पर अंग्रेज़ों की धारा बहती है। निदान इस समय भारत की शोभा दूसरी ही चाल की हो रही है, शहरों में लंबी चौड़ी हवादार सड़कें बन गई हैं उन में लालटैनों की माला जगजगाती नगर की शोभा को चतुर्गुण करती हैं॥

(पारिपार्श्वक का प्रवेश)

रि०। मित्र! आज तुम कौनसा पचड़ा लेकर बैठे हो ? इन निरर्थक बकवादों से क्या लाभ है ? देखो यह कैसा भयानक समय उपस्थित हुआ है, चारों ओर से शत्रुओं ने आकर ब्रटिश गवर्न्मेंण्ट को घेर रक्खा है। नाना प्रकार के उपद्रव

मच रहे हैं, हम लोग आदि काल से राजभक्त प्रजा हैं क्या इस समय हम लोगों को इसी खेल में मत्त रहना उचित है?

सूत्र०। भाई! यह तो तुम ने ठीक कहा परन्तु हम लोग कर ही क्या सकते हैं और गवर्न्मेंण्ट को सहायता ही क्या दे सकते हैं?

पारि०। क्यों नहीं हम लोग बहुत कुछ कर सकते हैं, क्या तुम ने इतिहासों को नहीं देखा है? तुम्हें विदित नहीं है कि प्राचीन कवि लोग अपनी वीर कविता से राजपूत योद्धाओं का उत्साह बढ़ा कर कैसे उमंग के साथ लड़ा दिया करते थे?

सूत्र०। हां हां यह सब तो हम जानते हैं पर इस से क्या? हम कुछ कवि तो हैं ही नहीं, कि युद्ध के समय उपस्थित रह कर वीरों का उमंग बढ़ा सकें॥

पारि०। तुमने समझा नहीं। काव्य दो प्रकार के होते हैं, एक दृश्य और दूसरा श्राव्य; दृश्यकाव्य का जैसा शीघ्र असर होता है उस का अनुभव तो तुम्हें नित्य ही हुआ करता है, हमारी इच्छा है कि हम लोग ऐसे वीररस पूर्ण नाटक खेलें कि जिस से हमारे भारतीय वीरगण प्रोत्साहित हो कर अपने शत्रुओं से जी छोड़ कर लड़ें। भारत संरक्षण अकेले अंग्रेज़ों के किये कदापि नहीं हो सकता जब तक कि हिन्दोस्तानी योद्धागण उन के साथ अपना पराक्रम न दिखावेंगे, क्योंकि यह हिंदुओं का देश है हिंदू प्रजा ही यहां विशेष रहती है और सरकारी पल्टनों में भी हिंदू ही विशेष हैं अतएव आज किसी ऐसे राजपूत वीर का चरित्र दिखाना चाहिये जिस के नाम सुनने ही से भारतीय वीरगण प्रोत्साहित हो जांय॥

सूत्र०। हां यह तो तुम्हारी सम्मति बहुत ही उचित है और इसी की समग्र भारतवासियों को कमी भी है, क्योंकि वे अपने पूर्वजों के उदार चरित्र भूल रहे हैं, उन को स्मरण कराना आवश्यक है परंतु ऐसा कौन सा नाटक है ?

पारि०। क्यों मुद्राराक्षस, नीलदेवी, महारानी पद्मावती आदि कई एक नाटक हैं जो इच्छा हो खेलो ॥

सूत्र०। नहीं २ वे सब तो कई बेर खेले जा चुके, अब कोई नवीन नाटक खेलना चाहिये जो मनोरंजक भी हो और उत्साह वर्द्धक भी हो ॥

पारि०। आहा! अच्छी याद आई, अभी हम लोगों के परम प्रिय भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र जी के वात्सल्य भाजन बन्धु श्री राधाकृष्ण दास ने महाराणा प्रतापसिंह का नाटक लिखा है उस को खेलो वह समयानुकूल है, क्योंकि एक तो वीर केशरी प्रातःस्मरणीय प्रतापसिंह का पवित्र चरित्र, दूसरे जगत्प्रसिद्ध अकबर बादशाह का राजत्व वर्णन सभी को अच्छा लगेगा और अकबर के काल से अंग्रेज़ी-काल में बहुत बातों में समानता भी है ॥

सूत्र०। बस २ ठीक कहा चलो शीघ्रता करो लोग उकता रहे हैं ॥

(दोनों जाते हैं)

प्रथम अङ्क

प्रथम गर्भाङ्क।

(स्थान उदयपुर राज्यदर्बार)

(महाराणा प्रतापसिंह, भीमाशा मंत्री तथा
कृष्णसिंह आदि सरदार गण)

(नेपथ्य में)

जय जय भानु-वंश में भान।
जासु प्रताप प्रकाशित जग में चहुं दिसि भानु समान॥
जाके हृदय सदा हो जागत सुभग आर्य कुल कान।
सोई या डूबे भारत असि रच्छन कों इक स्यान॥ १॥

प्रतापसिंह। हाय! मेरे हृदय में इस सिंहासन पर पैर रखते अग्नि ज्वाला सी भभक उठती है, यह राज्यसिंहासन कंटकमय प्रतीत होता है, मेरे प्यारे सरदारों! जिस दिन से हमारे पिता ने इस आसन पर पैर रक्खा उसी दिन से इस का पतन आरंभ हुआ, इस उदयपुर का उदय हृदय को शोकाकुल कर देता है, हाय अम्बर, जोधपुर,, बीकानेर आदि महाराज लोग आज दिन यवनों से घनिष्ट सम्बन्ध करने और बेटी व्याहने में अपने को धन्य मानते हैं और इस में अपना गौरव समझते हैं और कहां तक इस पवित्र सिसोदिया कुल के कलंक सक्ता जी ने भी अकबर के कृपापात्र हो कर सेवकाई स्वीकार कर ली है॥

कृष्ण सिंह। महाराज आप यथार्थ कहते हैं, एक मान संभ्रम ही में क्यों ख़ज़ाने की दशा भी तो शोचनीय हो रही है॥

भीमाशा। यथार्थ आज्ञा होती है अन्नदाता जी! खज़ाने की तो बात ही न पूछिये, आज कै कै बरस से इन दुष्टों के उपद्रव और लड़ाई से मालगुज़ारी एक पैसा नहीं मिलती स्वर्ग सदृश मेवाड़ प्रान्त मानो जंगल हो रहा है॥

प्रतापसिंह। ऐसी राज्यगद्दी से तो तापस वेष अच्छा। यदि यह बखेड़ा पीछे न लगा होता तो आज दिन हम एकान्त में भगवान का भजन तो करते होते? अब तो सांप छछुंदर सी गति हो रही है। हमने व्यर्थ इस गद्दी को कलंकित किया॥

रामसिंह। महाराज, यह आप क्या कहते हैं? इस पवित्र वंश की महिमा स्वर्ग तक फैल रही है, वाप्पा रावल से लेकर आज तक इस गद्दी का मान परमेश्वर ने रक्खा है आप ऐसा जी न करैं। सिंह के सिंह ही होते हैं जिस समय आप कृपाणहस्त हो कर सिंहनाद करैंगे, ये सब गीदड़ जहां के तहां दबक रहैंगे॥

प्रतापसिंह। यह ठीक है, पर समय फिर गया है देखिये चारों ओर म्लेच्छगण छा गये हैं, राजपूत राजा लोग इन के सम्बन्धी बनने में अपना अहोभाग्य मानते हैं आप ही के घर के सक्ता जी ने उन की वश्यता कर ली है। स्वदेशप्रेमी वीर राजपूतगण मन ही मन जल रहे हैं, ऐसे दुःसमय में कहिये क्या हो सकता है?

कृष्णसिंह। महाराज, आप का ध्यान किधर है? इन बातों को आप कभी स्वप्न में भी न विचारिये परमेश्वर बड़े ही को बड़ा करता है, जिस के हाथ असि धारण करने की सामर्थ्य है, जिस का हृदय साहस और बल से पूर्ण है, जिस का मस्तिष्क स्वाधीन भाव से भरा है उसी महापुरुष के सिर पर राज्य मुकुट शोभा देता है उस के वीर दर्प के आगे

किस की सामर्थ्य जो ठहर सके? देखिये सिंह को मृगराज कौन बनाता है? गरुड़ को पक्षिराज का तिलक किस ने किया है? और आप के पूर्वजों को इस राज्यासन पर किस ने बिठाया है? केवल अपने बाहुबल से, अपने स्वाभाविक तेज से, अपनी हृदय की दृढ़ता से। सूर्य का प्रकाश होने पर भी क्या दुष्ट चोरगण इधर उधर नहीं भागते? क्या प्रताप के प्रतापोदय होने पर ये दुराचारी खड़े रह सकते हैं?

मानसिंह। महाराज तनिक आंख खोलकर देखिये इस समय स्वदेशभक्त प्रजा मात्र आप की बाट जोह रही है, वीरों की दक्षिण भुजा बार २ आप ही के भरोसे फड़क रही हैं, सब एक दृष्टि आप ही की ओर देख रहे हैं, आप के उठनेही से फिर सब सामान एकत्र हो जायंगे, संसार में कीर्तिही मुख्य है, शरीर का क्या है यह तो नाशमान हई है आप स्मरण करें किस महान वंश में आप का अवतार हुआ है, सिंह के बच्चे को क्या कोई शिकार करना सिखा सकता है? आप क्या अपने कुल का यह वाक्य भूल गये?

"जो दृढ़ रक्खै धर्म को तेहि रक्खै करतार"

(नेपथ्य में)

सिसोदिया कुल शाख, जान चहत बिनु तुव उठे।
राखि सकै तो राख, यह अवसर पैहै न फिर॥

प्रतापसिंह। हैं! यह अमृत वर्षा किसने की?

चोबदार। धर्मावतार, कविराजा जी पधारते हैं॥

प्रतापसिंह। आदर के साथ लिवा लाओ (कविराज का प्रवेश) आइये कविराजा जी बिराजिये॥

कविराजा। घणी खमा अन्नदाता---

गुणगाहक नरपाल, राजपूत कुल केशरी।
गोब्राह्मणप्रतिपाल, तुव प्रताप दिन दिन बढ़ै॥

कृष्ण सिंह। कविराजा जी, आप बड़े समय पधारे, इस समय इस राज्य की वर्तमान दशा पर विचार हो रहा था ऐसे समय में आपका पधारना परम मंगल सूचक है॥

कविराजा। महाराज, इस समय का विचारही क्या?
सुनिये:—

जब लौं उये न भानु तबहि लौं जग अंधियारो। जब प्रताप भयो उदय भयो मंगल जग सारो॥ जबहिं धारि असि हाथ सिंह सम तुक हंकारो। तबहिं शत्रु धड़ शीश आपुहीं ह्वै हैं न्यारो॥ शत्रु नारि सौभाग्य तजि विधवा लच्छन धारिहैं। बालक गण निज पितु कों तबहीं पिण्डा पारि हैं॥

खंडेराव। वाह कविराज जी वाह, क्या अच्छी बात कही है, भविष्यत का कैसा सुन्दर चित्र आंख के सामने खींच दिया है॥

कविराजा। महाराज सुनिये पूर्वपुरुषों की कीर्ति सुनिये:—

सूर्यवंश इक्ष्वाकु जगत में कीरति छाई।
प्रगटे पूरन ब्रह्म राम रावनहिं नसाई॥
तिनके लव सुत भये शत्रु हति कीरति थापी।
बापा तिनके वंश जासु भय पृथ्वी कांपी॥
जनमे जंगल माहिं आइ चित्तौरहिं छीन्यो।
मोरि वंश परमार मार मेवारहिं लीन्यो॥
हिंदूपति हिंदूकुल सूरज नाम धारि के।
हिन्दू जस की ध्वजा उड़ाई गगन फारि कै॥
नवएं भये खुमान पराक्रम जग में छायो।
काबुल लौं करि विजय मुहम्मद कैद बनायो॥

समर सिंह भये समर सिंह भारत रखवारे।
पृथीराज संग यवन जूझि सुरपुरी सिधारे॥
कर्म देवि पति राज्य पुत्र सह रक्षन कीनो।
कुतबुद्दिनहिं हराइ यवन मसि टीका दीनो॥
करण सिंह तब यथा समय निज राज संभाखो।
ता सुत रावलमहप तिनहिं झालोरे माखो॥
रहप सिंह झालोर मारि निज राजहि थाप्यो।
रावल नामहिं पलटि महाराणा जग छाप्यो॥
रतन सेन या वंश आप संभ्रमहिं वढ़ायो।
अलादीन के दांत तोड़ि निज धर्म वचायो॥
ग्यारह पुत्र कटाइ बारहें अजय बचायो।
ठानि जहरव्रत नारि धर्म कुलधर्म रखायो॥
अजयसिंह करि विजय केलवाड़ा बस कीनो।
मुंज अचानक अजय सीस मैं घाव जु दीनो॥
सोइ जो लावै मुंज सीस युवराज हमारो।
तब पुत्रन प्रति यह अज्ञा महराज प्रचारो॥
निज पितु शत्रु हराइ मुंज सिर हम्मिर काटे।
बैठे तब हम्मीर केलवाड़ा के पाटे॥
मुहमद शा करि कैद चितौरहिं फेरि बसायो।
यवन दर्प दरि आर्य ध्वजा आकाश उड़ायो॥
प्रबल पराक्रम खेतसिंह जब गादी पायो।
यवन मारि अजमेर जीति निज राज मिलायो॥
जहाजपुर दच्छिण लौं जय करि राज बढ़ायो।
यवन सीस पग धारि वैर अपनो पलटायो॥
लक्खो राणा सीस राजलक्ष्मी तब आई।
लक्ष्मी चारो ओर मनहुं छाई छितराई॥

किये पहाड़ी प्रान्त आप बस रत्नखानि मह।
सोना चांदी रत्न अमोलक जड़े महल मह॥
क्तिने महल बहु बने राज श्री चहुं दिसि राजे।
फीके शत्रुहिं किये अटल सिर छत्र बिराजे॥
प्रबल पराक्रम साथ पौत्र कुंभा जब बैठे।
शत्रु हृदय दलमले क्रूर कायर घर पैठे॥
कविकुल मुकुट कहाइ नाम थिर जग में थापे।
विजय कियो गुजरात यवन हिय भय सों कांपे॥
याही कुल रानी मीरा जग कीरति छाई।
गिरिधरलाल रिझाइ बहुत बिधि लाड़ लड़ाई॥
राणा सांगा कीरति जग मैं को नहिं जानै।
जाके असि को तेज शत्रु जिय सहजहिं मानै॥
बाबर कों बावरो कियो रण स्वाद चखाई।
कितेक राजा रावल रावत सिरहिं नवाई॥
रत्नसिंह मेवाड़ रत्न निःसंक सदाई।
पुर के फाटक रात दिवस राखे खुलवाई॥
निज भुज बल नहिं घुसन दिये यवनन रजधानी।
जिनके यश की सदा जगत मैं चली कहानी॥
बिगत निसा भये उदय भानु खल लंपट लाजे।
चहुं दिसि छयो प्रताप सिंह लखि गीदड़ भाजे॥
अब सोचन की बात कौन है शूर बीर गन।
उठो उठो कटि कसो याद करि निज पवित्र पन॥
जिनके नायक खुद प्रताप तिनको का संसय।
जिनको टेढ़ी भृकुटी लखि भाजत जग के भय॥
जबलौं जीवन देह तबहि लौं जग के झंझट।
आपु मुये जग परलय तासों सुनहु महा भट॥

जब लौं घट मैं प्रान न तबलौं छूअन दीजै।
यवन सैन मेवारहिं लखि २ हायनि मोजै॥
पिंजर बद्ध विहंगम से परबस जीवन धिक।
जब लों जीवन रहै दुःख नहिं होइ मानसिक॥
अब विलंब को काज नहीं असि वेग उठावहु।
निज प्रताप अब है प्रताप अरिगनहिं देखावहु॥
कोउ काज जग कठिन नहीं जो दृढ़ व्रत धारो॥
तातें हे नर व्याघ्र वेगि रन घोष प्रचारो॥
आगो पीछो त्यागि होहु सब एक प्रेममय।
यह निहचय जिय धरो धर्म जित जय तित निसचय॥

प्रतापसिंह। (आवेश से खड़े होकर)

सुनो सुनो मेरे वीर सरदारों—

जब लौं तन मैं प्रान न तब लौं टेकहि छोड़ौं।
स्वाधीनता बचाइ दासता शृङ्खल तोड़ौं॥
जो निज कुल मरजाद सहित जीवन तौ जीवन।
नहिं तातें शत गुणित मरन रन मैं जस पीवन॥
जो पै निज शत्रुहि मारि कै यह परतिज्ञा राखिहौं।
तौ या सिंहासन पैं बहुरि पग धारन अभिलाखिहौं॥

(पटाक्षेप)

द्वितीय गर्भाङ्क।

(स्थान उदयपुर का किला)

(सैनिक गण)

१ सैनिक। क्यों भाई, कुछ तुमने भी सुना?
२ सैनिक। कौन बात?

१ सैनिक। सुना है चित्तौर उद्धार के हेतु दर्बार तयारी कर रहे हैं॥

२ सैनिक। उड़ती २ खबर तो हमने भी सुनी है, भगवान श्री हजूर को सुमति दें कि जल्दीही उधर की ओर रुख करैं भाई वीर सिंह अब तो सही नहीं जाती॥

वीरसिंह। हम लोग तो उसी समय नहीं हटते थे पर क्या करैं बड़े दर्बार ने माना नहीं, नहीं तो चितौर ले लेना इन लोगों को मालूम हो जाता॥

१ सैनिक। इस में कौन संदेह था, देखो एक वीरवर जयमल अड़ गये तो दो घड़ी लग गई और जान पड़ा कि चित्तौर लेना कैसी टेढ़ी खीर है॥

वीर सिंह। जयमल और पुत्त ने संसार में अपनी कैसी कीर्त्ति छोड़ी! हाय! हम अभागे थे जो उस समय न काम आये॥

१ सैनिक। भाई मालिक को भी अकेला छोड़ना उचित न था, करते क्या? अच्छा क्या चिन्ता है, प्रतापसिंह के प्रताप का अब उदय हुआही चाहता है, अब ये कहां टिकते हैं। जैसे भगवान सूर्यनारायण के उदय होतेही चोर लंपट अन्तर्ध्यान हो जाते हैं देखना वैसे ही इनका उदय यवनों को नाश कर देगा॥

वीरसिंह। हां हां और क्या, अब वह समय पहुंचाही चाहता है, सब लोग दृढ़ रहो देखैं कौन कहां तक वीरता दिखाता है॥

१ सैनिक। अजी हम सब तयार हैं, प्राण रहते तो कोई हटतेही नहीं पर सिर कटने पर भी धड़ दो एक को लेही मरैगा॥

वीरसिंह। देखो २ श्री हजूर की सवारी इधरही मे आखेट को पधारती है। आओ हम लोग ऐसे गीत गावैं जिस में और भी हमारे मालिक का उत्साह बढ़ै॥

(सब सैनिक गाते हैं)

तजि सोच उठौ सब वीर बांधि दृढ़ आसा।
अब भयो भानुकुल भानु प्रताप प्रकासा॥
दुख मय परबस की रैन अहो सब बीती।
दिन गये यवनगन जो चितौर गढ़ जीती॥
चलि वेग लगाओ मसि उनके मुख चीती।
कसि कमर उठौ अब एक होइ करि प्रीतो॥
सब भाजहिंगे लखि इनको तेज बिकासा।
अब भयो भानुकुल भानु प्रताप प्रकासा॥ १॥
चलि शत्रुन के दल भेदि निसान उड़ावैं।
फिर चित्रकूट पैं आर्य ध्वजा फहरावैं॥
आनंद सों सबमिलि नाचैं कूदैं गावैं।
स्वाधीन दिवस सब सुख सों सदा बितावैं॥
निर्द्वन्द होइ चित चाव बढ़ाइ हुलासा।
अब भयो भानुकुल भानु प्रताप प्रकासा॥ २॥
अपनी अपनी करतूति सबै दिखराओ।
लरि लरि अरि सैनहिं इत तें तुरत भगाओ॥
जड़ सों भारत तें इनके नाम मिटाओ।
फिर आर्य सुजस की नदी पवित्र बहाओ॥
करि कै अब विजय मिटाओ जग परिहासा।
अब भयो भानुकुल भानु प्रताप प्रकासा॥ ३॥
परसन्न होइ परताप जबहिं प्रगटायो।
तौ विजय महूरत अब तुम्हरे दिसि आयो॥

चूकौ जिनि समयो ऐसो सुन्दर पायो।
तुम्हरे सिर राजत छत्र प्रताप सुहायो॥
उत्साह सहित उठि कीजै शत्रु बिनासा।
अब भयो भानुकुल भानु प्रताप प्रकासा॥ ४॥

(सभों का प्रस्थान)

तृतीय गर्भाङ्क।

(स्थान उदयपुर-अन्तःपुर)

(महाराणा विराजमान हैं)

महाराणा। कैसा कठिन समय उपस्थित हुआ है? जब से यहां मुसलमानों के क़दम आये सारा देश उजाड़ हो गया, खज़ाना खाली पड़ा है, खेत ऊसर हो रहे हैं, सारी श्री जाती रही, जिस वंश की उन्नतध्वजा सदा आकाश भेद कर उड़ा करती थी, हाय! आज वह वंश भी अपने आंखों से चित्तौरगढ़ में विजातीय शत्रुओं का निवास चुप चाप सहन कर रहा है! पितृचरण ने न जाने क्यों और किस जीवन के लाभ से जीते जी चित्तौर छोड़ दिया और अपने शरीर में प्राण रहते भी शत्रुओं को प्रवेश करने का अवसर दिया? धन्य है वीरवर जयमल और पुत्त को कि जिन्हों ने उस डूबती हुई मेवाड़ की कीर्ति के कुछ तो ठहरने का ठिकाना किया! आह! कैसी वीरता और साहस के साथ प्रबल पराक्रमी शत्रुओं की गति रोध किया था क्या उनकी अक्षय कीर्ति कभी लोप हो सकती है? ऐसे पुरुषरत्न क्या हमें सहायक मिलेंगे? जो चार

वीर ऐसे साहसी हमें मिलें तो हम प्रतिज्ञा पूर्वक मेवाड़ही से क्या सारे भारत से इनको निकाल दें। पर क्या हुआ? हमारे राज्य में इन्हों ने प्रवेश किया है, हमारे हृदय पर तो हमारा पूरा अधिकार है? लाख २ कठिनाइयों के पहाड़ गति रोध करने को क्यों न खड़े हों परंतु प्रताप के वेग को कौन रोक सकता है? यद्यपि इस समय राजस्थान के सब राजाओं ने स्वार्थ के वश होकर आत्मविस्मरण कर दिया है, इन विधर्मी शत्रुओं के साथ सम्बन्ध कर लिया है और यहां तक कि हमारेही छोटे भाई ने अकबर से मित्रता कर ली है परंतु क्या इस से हम कभी हताश हो सकते हैं? कभी नहीं, यदि इन कुलांगारों को अपना प्रताप न दिखाया और इनको इस नीचता के लिये लज्जित न किया तो मेरा नाम प्रतापसिंह नहीं। अपने पिता के लिये हम बहुत शीघ्र रनगंगा में स्नान करके प्रायश्चित्त करेंगे। हमारे हृदय में शक्ति चाहिये हमारे हाथ में बल चाहिये फिर हमारे आगे कौन ठहर सकता है? देखो हमारे वंश के मूलपुरुषों ने कैसे पराक्रम और साहस के कर्म किये हैं? भगवान श्रीरामचन्द्र जी ने अपनेही बाहुबल से बानर और भालुओं की निमित्तमात्र सैन्य बना कर रावण ऐसे प्रबल शत्रु का विनाश किया था, बाप्पा रावल ने खुरासान तक विदेश में जाकर अपनी ध्वजा फहराई थी, खुमान ने काबुलियों का सारा कट्टरपन भुला दिया था, योंही बराबर एक से एक बीर होते हो गए, क्या उनके पवित्र कुल में जन्म धारन करके हम इस कुल को कलंकित करें? कभी नहीं। और फिर जैसी कठिनाइयां उन्हें झेलनी पड़ी थीं उससे तो कहीं कम हमारे आगे हैं। हम तो अपने घर अपने स्वदेश प्रेमी वीरों

के बीच में बैठे हैं इन भुनगों को दूर करना हमारे लिये क्या बड़ा भारी काम है। भगवान इस समय सानुकूल प्रतीत होते हैं जिधर देखते हैं उत्साह दिखाई देता है जिससे सुनते हैं उमंग भरी बातें कान में आती हैं क्या ऐसा अवसर चूकने योग्य है? कभी नहीं, और फिर ऐसे पराधीन निर्जीव जीवन से तो मरना ही उत्तम, या तो चित्रकूट गढ़ की ऊंची शिखर पर सिसोदिया कुल की पवित्र ध्वजा फहराती देख कर अपनी छाती ठंढी करेंगे अथवा अचल कीर्त्ति संसार में छोड़ कर अक्षय धाम का सिंहासन अधिकार करेंगे [आवेश से] प्रतापसिंह! तुझे अपनी जननी के दूध की सौगन्ध है जो प्राण रहते कभी इन म्लेच्छों के निकालने की चेष्टा से निरस्त हो। जो अपनी प्रतिज्ञा पालन कर सकै तौ तो वीर माता का दूध पीना सफल है नहीं तो ऐसे जीवन पर धिक्कार! अकबर अपने को बड़ा प्रतापी बड़ा चतुर बड़ा वीर लगाता है, दक्खिन का राज्याधिकार करके उसे बड़ा गर्व हुआ है, राजपूताना के कुलांगारों को अपना साला सुसरा बना कर बड़ा फूला है, अपना राज्य अटल समझता है, परंतु प्रताप! तेरा नाम तभी है जब तू इस रावण सरीखे शत्रु का मुकुट अपने चरण तल में मर्दन करे। कुछ चिन्ता नहीं जो इसका दर्प चूर्ण न किया तो संसार में अपना मुंह न दिखाऊंगा (नेपथ्य की ओर देख कर) अच्छे अवसर पर राज्य महिषी आ रही हैं इनके मन की थाह तो लें देखें यह कितने पानी हैं॥

(राज्य महिषी का प्रवेश)

रानी। आर्यपुत्र की जय हो। क्या मैं सुन सकती हूं आज आप की चिन्ता का क्या कारण है?

महाराणा। भला तुमसे न कहैंगे तो किस से कहैंगे? हमतो अभी तुम्हें बुलाने ही वाले थे अच्छे अवसर पर तुम्हारा आना हुआ हम इस समय यही सोच रहे थे कि इस कठिनाई के समय में हमें क्या करना उचित है? क्या हम भी जयपुर की तरह अपनी प्राण से भी प्यारी बेटी को यवनराज को भेट करके अपना झूठा साज बाज बढ़ावैं और अपने बड़ों की कीर्त्ति को मिट्टी में मिलावैं?

रानी। महाराज कभी नहीं आपको ऐसा कभी विचारना ही न चाहिये ऐसा विचार भी करने से प्रायश्चित्त लगता है विचारी भोली भाली हिन्दुओं की लड़की अपना भला बुरा क्या जानैं उनका तो सुख दुख सब मा बाप के हाथ है जो वे किसी लोभ में पड़कर वा प्रान के डर से उन का सर्वनाश करते हैं तो न केवल अपनी कुलमर्यादा को उल्लंघन करके संसार में अपयश के भागी होते हैं वरंच परमेश्वर के यहां भी उत्तरदाता होना पड़ता है मैं तो कभी अपनी प्यारी बेटी को म्लेच्छ कुल कलंक की हवा भी न लगने दूंगी चाहे आप भी इस में बुरा मानें तो मानें और फिर महाराज यह जीवन कितने दिन का? इस नाशमान शरीर की रक्षा के लिये अपने कुलको कलंकित करना कभी उचित है? मैं तो स्त्री हूँ मेरी तो छोटी बुद्धि है पर मेरी तोही इच्छा हैं या तो इन विजातीय शत्रुओं को मार कर महाराज के साथ चित्तौर राज्य सिंहासन की गौरव के साथ अधिकारिनी बनूं अथवा वीरदर्प से गिरे हुए महाराज के पवित्र शरीर को अपने गोद में लेकर हँसते हँसते भारत रमनियों का मुख उज्वल करके पति लोक में आप से मिलूं॥

महाराणा। साधु महाभागे साधु! प्रतापसिंह की अर्द्धाङ्गिनी होने का अधिकार तुम्हारे अतिरिक्त किस को है? तुम

निश्चय रक्खो जब तक इस शरीर में प्राण है कभी इन म्लेच्छों की आधीनता स्वीकार न करेंगे ॥

(धूलधूसरित राजकुमार का प्रवेश)

राजकुमार । (रानी की पीठ पर लपट कर तुतलाते हुए) मां! दलबाल जवनों का छिकाल खेलने जायंगे ॥

रानी । (मुख चूम कर) हां, हां बेटा तुम भी ज़रूर जाना अच्छा बताओ तो हमारे लिये क्या लाओगे ?

राजकुमार । भाई अमतो छहजादा को मालेंगे उछके गले की होले की कंथी लेआवेंगे छो तुम को देंगे औल उछकी तलवाल दलबाल को देंगे औल तोपो हम लेंगे ॥

महाराणा । भला मुसलमान की जूठी टोपी तुम पहिरोगे ?

राजकुमार । काहे तुमीं न कहते थे कि लाजा का मुकुत जूथा नहीं होता ?

(महाराज गोद में लेकर मुख चूमते हैं)

(नेपथ्य में गान)

सबै मिलि सावधान अब होंय । उदय होत भारत नभ सूरज तिमिर यवन कुल खोय ॥ अपुने अपुने काज संभारहु तजि आलस सब कोय । करहु पवित्र शत्रु यवनन के रुधिर भूमि कों धोय ॥

महाराणा । ओह! बड़ी देर हो गई दरबार का समय हो गया सुना है मानसिंह दक्षिण विजय करके आते हैं उदयपुर भी रहने वाले हैं उनके आतिथ्य का भार मंत्री को सौंपा है क्योंकि हम तो उस म्लेच्छप्राय हिंदू कुलकलंक का मुख नहीं देखना चाहते ॥

[प्रस्थान]

इति प्रथम अंक ॥

द्वितीय अङ्क॥

प्रथम गर्भाङ्क।

[स्थान दिल्ली ज़नाना मीना बाज़ार एक से एक चढ़ बढ़ कर तैयारी की दूकानें और उन पर रूपवती स्त्रियां सौदा बेचती हुईं बड़े २ घरों की बहू बेटियां सखियों के साथ घूम रही हैं। अकबर एक ऊंचे खिरकी से चिक की ओट में दिखाई देता है]

[पृथ्वीराज * की रानी का प्रवेश और एक वृद्धा का उस के पास आगमन]

वृद्धा। बेटी तू किसी बड़े घराने की जान पड़ती है जो तुझे बाज़ार की सैर करने की ख़्वाहिश है तो आ मैं तुझे सैर करा दूं क्योंकि बहुत बड़ा बाज़ार है तू नाहक़ भटकती फिरेगी॥

रानी। आप कौन हैं?

वृद्धा। ए मैं इसी शहर की रहने वाली हूं कोई नंगी लुच्ची नहीं हूं तुम डरो मत तुम से मैं कुछ सवाल न करूंगी॥

रानी। (मन में) जान पड़ता है इसी कुटनी के द्वारा अकबर अपनी घृणित इच्छा को चरितार्थ करता है। शकुन तो अच्छा मिला आज यदि भगवान की कृपा होगी तो इन सभों को इसका मज़ा चखाऊंगी॥

वृद्धा। [चटक मटक कर] ऐ बलैया लूं बेटी तू किस सोच में पड़ी है मैं तुझे ऐसी ऐसी सैर कराऊंगी कि तू खुश हो जायगी॥

रानी। नहीं नहीं और कुछ नहीं सोचती थी—आप की भल मनसाहत सोच रही थी (मन में) भला नानी देखें आज तू मुझे सैर कराती है या मैं तेरे बाप के साथ तुझे जहन्नुम

* महाराज बीकानेर का भाई और अकबर का दरबारी सरदार॥

की सैर कराती हूं ॥

वृद्धा । यह आप की मेहरबानी है मैं किस क़ाबिल हूं (मन में) वह मारा—अब कहां जाती है आज का शिकार तो बहुत ही नफ़ीस है आज भारी गठरी हाथ आएगी (प्रगट) अच्छा हुजूर अब इधर मुलाहिज़ा फ़र्मावें यह जौहरिन की दूकान है कैसे कैसे बेबहा जवाहिरात रौनक़बख़्श हैं कि जिनकी चमक से सारा बाज़ार खिल रहा है [हंस कर जौहरिन की ओर देख कर] और वो जौहरिन ने तो अपने याकूत लब गौहर दन्दां को आब के आगे सब को मात कर रक्खा है ॥

जौहरिन । (भौंह टेढ़ी करके) चल मुई बूढ़ी ख़ब्बीस तुझे हर वक़्त दिल्लगी ही सूझती है (रानी से) हुजूर देखें यह याकूत की अंगुश्तरी कैसी ख़ूबसूरत है यह हुजूर ही के पहिरने क़ाबिल है (रानी अंगूठी लेकर देखती है)

एक सखी । [वृद्धा से] क्यों बूआ अब भी जो तुम्हें ये ज़ेवरात पहिरा दिये जांय तो क्या तुम किसी से कम जचो ?

वृद्धा । [प्रसन्न हो कर] अब क्या बेटी जब हमारा ज़माना था तब था अब तो बूढ़े मुंह मुंहासे ॥

जौहरिन । नहीं नहीं ऐसा क्यों जी छोटा करती हो अब भी तुम्हारे क़द्रदान—

वृद्धा । [रानी से] ऐ हुजूर जो लेना देना हो ले कर चलिये अभी बहुत देखना बाक़ी है नावक़्त हो जायगा ॥

रानी । ठीक है [एक सखी से] यह अंगूठी ले लो ॥

[अंगूठी का दाम दे कर सब आगे बढ़ती हैं]

वृद्धा । देखिये ये बजाजिन की दूकान है और यह मनिहारिन की इधर मुलाहिज़ा फ़र्माइये मुसौवरिन की दूकान पर कैसी कैसी ख़ूबसूरत तस्वीरें आवेज़ां हैं अहाहाहा! यह दे-

लिये हमारे बादशाह सलामत की तस्वीर है ओ हो हो! कैसा शबाब है ?

(रानी के मुंह की ओर देखती है)

रानी । (घृणा नाव्य करती हुई मन ही मन) भला चड्ढी देखा जायगा तेरा यह शबाब (प्रकाश) यह सुन्दर चित्र किस स्त्री का है ?

मुसौ० । हुजूर यह बादशाह बेगम जोधाबाई की तस्वीर है ॥

रानी । यह वही कुल कलंकिनी है ?

वृद्धा । [मन में] घबराइये न—अभी आप की भी क़लई खुली जाती है । [प्रकाश] ऐ हुजूर, वक़्त नावक़्त होता है अभी हुजूर को बड़ी बड़ी सैर करानी है एक एक दूकान पर इतनी देर करने से कैसे काम चलेगा ?

मुसौ० । मर रांड़ मुंहजली, तेरे मारे किसी का भला काहे को होने पाएगा ।

रानी । [हंसकर एक चित्र मोल लेकर आगे बढ़ती है] [वृद्धा रानी को दिखाते ही दिखाते नेपथ्य की ओर चली जाती है]

पटाक्षेप ।

द्वितीय गर्भाङ्क

[स्थान दिल्ली बादशाही महल के भीतर एक अंधेरा रास्ता पृथ्वीराज की रानी की सखियां घबराई हुई]

१ सखी । यह क्या अन्धेर हुआ महारानी कहां चली गईं कुछ पता नहीं लगता यह ठग की बुड्ढी न जाने किधर महारानी को लेकर गुम हो गई हाय! अब क्या करैं ?

२ सखी । हम सब तो बे मौत मारी गईं अब महाराज को चल कर कौन मुंह दिखाएंगी ?

३ सखी । अरे अभी तो हम लोगों के साथ थीं इतने ही में वह

निगोड़ी महारानी को लेकर किधर समा गई?

४ सखी। हा! हमारी सखी की कौन जाने क्या दशा होती होगी हम लोगों ने साथ ही रह कर क्या किया?

५ सखी। महाराज जब सुनेंगे उनकी क्या दशा होगी? हम में से एक को भी जीता न छोड़ेंगे॥

[व्याकुल हो कर इधर उधर घूमती हैं एक ख़वासिन का प्रवेश]

ख़वासिन। तुम सभों ने क्या शोर मचा रक्खा है? जानती नहीं हो यह शाही महल है यहां अदब से रहना चाहिये?

१ सखी। हम सब अदब सदब क्या जानें इस समय तो हम लोगों का जो ठिकाने नहीं है हमारी रानी का पता नहीं लगता बहिना तुम जानती हो तो बताओ बड़ा जस मानेंगे

ख़वासिन। (मुस्किरा कर) तुम्हारी रानी? तुम्हारी रानी इस वक़्त हमारी रानी बनी हैं तुम लोग घबराओ मत॥

२ सखी। चल लुच्ची तुझे इस समय भी हंसी सूझती है? सच सच बता हमारी रानी कहां हैं?

ख़वासिन। (हंस कर और चमक कर) ऐ तुम मानती हो नहीं हो तो हम क्या कहें? अच्छा अभी दम भर में देखना तुम्हारी रानी माला माल यहीं पहुंचती हैं यह तो शाही महल है यहां का दस्तूर है कि ख़ाली आवे और भरी जावे (व्यङ्गपूर्वक हास्य)

सखियां। (रूखी हो कर) चल निगोड़ी तेरा सत्यानाश हो तेरी जीभ निकाल ले॥

ख़वासिन। (हंस कर) तो तुम सब क्यों रश्क खाती हो चलो न तुम सभों का भी बंदोबस्त हम किए देते हैं यह तो शाही महल है यहां कमी क्या है?

(सब सखियें उसे पकड़ने को दौड़ती हैं और वह हंसती हुई भागती है) पटपरिवर्तन

तृतीय गर्भाङ्क

(स्थान बादशाही महल में एक सुसज्जित कमरा)

(अकबर उत्कण्ठित भाव से इधर उधर घूमता और द्वार की ओर देखता है)

(नेपथ्य में गान)

मधुकर काहे कों अकुलात। खिलन चहत पंकज की कलियां अब न दूर परभात॥ यह पराग तेरेहि बांटे को क्यों नाहक़ ललचात। छन हो में छकि प्रेम सुधा तू डोलैगो इतरात॥

अकबर। हाय! मैं इतना बड़ा शाहन्शाह मेरे यहां दुनिया के ऐशो इशरत के सामान मुहय्या मगर मेरे दिल को एक दम भी राहत नहीं शबोरोज़ फ़िक्र लहज़ः बलहज़ः तरद्दुदात, रोज़ नई ख्वाहिशें, रोज़ नये हौसिले और हाय इन गुलबदनों की चाह ने तो मुझे पागल ही बना दिया कितनी देर से कितने कामों का हर्ज करके बावला सा यहां घूम रहा हूं मगर अब तक सिवाय हसरत के कुछ हाथ न आया (नेपथ्य में पैर की आहट सुन कर) मालूम होता है वो नसीरन हमारे गुलेमुराद को लिये आ रही हैं किसी ने खूब कहा है :—

"वादए वस्ल चूं शवद नज़दीक
आतिशे शौक़ तेज़तर गर्दद"

(द्वार खुल जाता है और वृद्धा का रानी का हाथ पकड़ कर खींचते हुए प्रवेश)

वृद्धा—उम्रो दौलत की ख़ैर तरक़्क़िए जाहो हशमत, मुरादें भर पूर—लौंडो दुआगो अब रुख़सत की तलबगार है॥

रानी। (वृद्धा को पकड़ कर) क्यों री हरामज़ादी यहो सैर कराने लाई थी अब चली कहां?

वृद्धा। (हाथ छुड़ाकर मुस्किराती हुई) बेटा दम भर बाद इसी सैर को फिर जनम भर तरसोगी॥

(रानी वृद्धा को एक लात मारती है वह गिर पड़ती है और उठ कर कमर पकड़े गिरती पड़ती बड़बड़ करती जाती है)

अकबर। [रानी के पास आकर] प्यारी इधर आओ ज़रा आराम फ़र्माओ किस सोच में हो देखो यह वह शाहन्शाहे दिहली जिस की निगाह की कोर दुनिया के बादशाह देखते रहते हैं आज तुम्हारे क़दमों की गुलामी की ख्वाहिश करता हाज़िर है॥

रानी। [मुंह फेर और रूखे स्वर से] देख अकबर तू बहुत बड़े सिंहासन पर बैठा है ऐसे दुष्करमों से इस राज्यसिंहासन को कलुषित न कर और मुझे अभी मेरे घर पहुंचा॥

अकबर। [रानी का हाथ पकड़ना चाहता है और रानी झटक कर हट जाती है] ऐ जानेजां इस नीमजां को अब न सताओ, तुम्हारे इस जां निसार ने इसी वक़्त तुम्हारी नाज़नीं अदा पर जो कबित्त तसनीफ़ किया है उस को भी ज़रा सुन लो :—

"शाह अकब्बर बाल की बांह अचिन्त गही चल भीतर भौने। सुन्दरि द्वार ही दृष्टि लगाय के भागिवे को भ्रम पावत गौने॥ चौकत सो सब ओर बिलोकत संक सकोच रही मुख मौने॥ यों छबि नैन छबीले के छाजत मानो बिछोह परे मृग छौने॥ १॥

रानी। [क्रोध से] देख नराधम दिल्लीपति कुलांगार! मैं राजपूत बाला हूं मेरा अङ्ग स्पर्श न करना नहीं अभी तुझे भस्म कर दूंगी॥

अकबर। (हाथ जोड़ कर) नहीं नहीं ख़फ़ा होने की बात

नहीं है, देखो, यह नौलखा हार, यह बेशक़ीमत चम्पाकली यह बेबहा मोतियों का सतलड़ा, ये सब एक से एक उमदा जवाहिरात सब तुम्हारी नज़र हैं और यह दिल्ली का बादशाह हमेशः के लिये तुम्हारा गुलाम है आज अपनी ज़रा सी मेहर की निगाह से इस बादशाहत को बिला क़ीमत ख़रीद सकती हो ॥

रानी। [लाल लाल आंखें निकाल कर और निर्लज्ज भाव से] क्यों रे नर पिशाच, तू मेरी बात न सुनेगा ? क्या तेरा काल ही तेरे सिर नांच रहा है ? क्या आज मुझी को नरपति हत्या से अपना हाथ अपवित्र करना होगा ? सुन मैं तेरी सब दुष्टता सुन चुकी हूं और आज तेरे हाथ से निर्दोष राजपूत बालाओं के सतीत्व रक्षार्थ मैं तयार होकर आई हूं तुझ से फिर भी यही कहती हूं कि अपनी इस नीचता के काम को छोड़ और अपने कर्तव्य की ओर देख ॥

[अकबर फिर रानी का हाथ पकड़ना चाहता है रानी झपट कर अकबर को धरती पर पटक कर अपनी कमर से छिपाए कटार को निकाल अकबर की छाती पर बैठ क्रोध से हांफती हुई]

रानी। ले नराधम, जो तू मानता ही नहीं तो आज तेरा यहीं निबटेरा किये देती हूं और तेरे बोझ से पृथ्वी को हलकी करती हूं (कटार अकबर के गले के पास ले जाती है)

अकबर। [आर्तस्वर से] तौबा - तौबा - मैं हाथ जोड़ता हूं मेरी बात ख़ुदा के लिये सुन लो मुझे न मारना मेरी एक बात सुन लो--

रानी। कह क्या कहता है ?

अकबर। मैं अपने गुनाहों के लिये सख़्त नादिम हुआ मेरा क़ुसूर मुआफ़ करो मेरी जां बख़्शी करो मैं ख़ुदा की क़सम

खाकर कहता हूं मुझे मेरी उम्र नातजुर्बाकार और दुनियावी यारों ने धोखा दिया मैं अब तक इस पाकदामनी इस बहादुरी इस नेक चलनी को कभी ख्वाब में भी न सोच सका था। मेरे ख़ियाल में औरतों का रक़ीक़ दिल तमः के फंदे से फांसना आसान था। वह परदा आज दूर हुआ मुझे बख्शिए। लिल्लाह मुझे बख्शिए अब कभी किसी के साथ ऐसी गुनाह सरज़द न होगी ॥

रानी। मुझे तेरी बात का विश्वास कैसे हो? हाय! जिन राजपूत वीरों की सहायता से आज तुझे यह प्रताप प्राप्त हुआ है, रे कुलांगार, उन्हीं की बहू बेटियों पर हाथ डालते तुझे लज्या नहीं आती! धिक्कार है तुझको!

अकबर। आप मुझ नापाक गुनहगार को जितना धिक्कार दें बजा है, मगर याद रक्खें, यह हुमायूं का बेटा अकबर जब कि खुदायपाक के नाम पर आज अहद करता है अगर कभी फिर उस से यह गुनाह हुआ तो इस दुनिया में मुंह न दिखाएगा। अब मुझे ज्यादा न शर्माएं और मेरी जां बख्शी करें ॥

रानी। देख तू बड़ा बादशाह है। मेरे स्वामी ने तेरा नमक खाया है इसलिए तुझे आज छोड़ देती हूं परन्तु समझ रख तेरा राज्य केवल राजपूतों के बाहुबल से है यदि आज पीछे कभी तेरी यह हरकत सुनने में आएगी सारे राजपूताने में तेरे इस भेद को खोल दूंगी और एक दिन में राजपूत मात्र को तेरा बैरी बनाऊंगी [अकबर को छोड़ देती है]

अकबर। (रानी के पैरों पर गिर कर) मैं आप के इहसान से कभी सुबुकदोश नहीं हो सकता। आपने न सिर्फ आज मेरी जां बख्शी की बल्कि मुझे बहुत बड़े गुनाह से बचाया। मेरे ऊपर जैसे इतना करम हुआ यह भी वादा

फ़र्मांया जाय कि यह भेद किसी से ज़ाहिर न किया जायगा। और मेरी गुनाह मुआफ़ फ़र्माई जाय ॥

रानी। मैं प्रतिज्ञा करती हूं कि यह भेद किसी से न प्रकाश करूंगी। परन्तु मैं गुनाह मुआफ़ करने वाली कौन ? उस करुणामय जगत पिता की सच्चे जी से क्षमा प्रार्थना कर वही तुझे क्षमा करेगा ॥

[अकबर घुटने के बल बैठ कर भगवान से क्षमा प्रार्थना करता है। रानी कटार लिए खड़ी है]

अकबर :—

रहा मैं गुमराह ज़िन्दगी भर इलाही तौबा इलाही तौबा
चला न नेकी की हाय रह पर इलाही तौबा इलाही तौबा
दी इस लिए तुझको बादशाही कि तेरे बन्दों को पहुंचे राहत
वले किया मैंने ज़ुल्म इन पर इलाही तौबा इलाही तौबा
रहा लगा नफ़्स पर्वरी में न दिल दिया दाद गुस्तरी में
पड़े मेरे अक़्ल पर ये पत्थर इलाही तौबा इलाही तौबा
बहाना ज़ालिमकुशी का करके किए बहुत मुल्क फ़तह हमने
वले किए और उनपः बदतर इलाही तौबा इलाही तौबा
भला हो इस हूर पारसा का उठाया आंखों से जिसने परदा
हैं ज़िश्त ए़माल मेरे एकसर इलाही तौबा इलाही तौबा
हुआ है दामन गुनाह यों तर कि गर निचुड़ जाय वह ज़मीं पर
तो डूब जाऊं मैं उस में ता सर इलाही तौबा इलाही तौबा
फ़क़त तेरे बख़्शिशो करम का है एक भरोसा मुझे खुदाया
नहीं कोई और अब है यावर इलाही तौबा इलाही तौबा
नज़र जो किर्दार पर मेरे की तो हो चुकी शक्ल मुख़लिसी की
निगाह अपनी करम पः तू कर इलाही तौबा इलाही तौबा ॥*

[धीरे धीरे पटाक्षेप]

---

* यह ग़ज़ल मित्रवर बाबू जगन्नाथ दास बी० ए० (रत्नाकर).की सहायता से बनी है

चतुर्थ गर्भांक

[स्थान दिल्ली शाही महल का एक कमरा]

(अकबर का चिन्तित भाव से प्रवेश)

अकबर। हाय मैं इतने दिनों तक किस तारीकी में था इतनी उम्र किस गुनहगारी में बिताई, इलाही, इस अपने बँदे पर करम कर अब इस दिले बेचैन को सब्र अता कर॥

खुदाया" एवज़ न कर मेरे जुर्मो गुनाह बेहद का
इलाही तुझको गुफूरुल रहीम कहते हैं
कहीं कहैं न उदू देख कर मुझे मुहताज
यह उन के बंदे हैं जिन को करीम कहते हैं"

आहा! दरहक़ीक़त उस के बराबर कौन करीम है अपने बंदे को गुमराह देखकर आज इस पाकदामन औरत के ज़रिये से कैसी नसीहत दी। उफ़—बला की तेज़ी ग़ज़ब की दिलेरी कैसा खुदाई नूर था? क्या यह वाक़िआ कभी भूलने का है? हर्गिज़ नहीं, अगर मेरी यह हरकत इसी तरह जारी रहती और यह ख़बर बहादुर राजपूतों के कान तक पहुंचती ज़रूर था कि हमारी सल्तनत पर ज़वाल आता। आहा! उस जनाबेबारी की दर्गाह में किस ज़ुबां से शुक्रिया अदा करूं? उस की बेहद्द शफ़क़त का किस मुंह से बयां करूं? आहा! कैसे मुसीबत के वक़्त में इस नाचीज़ की पैदाइश हुई? ओफ़! उस संगदिल चचा की सख़्ती क्या कभी भूल सकती है? उस वक़्त खुदाय-पाक ने कैसी मुश्किलात आसान की! फिर से यह तख़्तो ताज बख़्शा; ख़ानबाबा की बग़ावत जिस वक़्त याद आती है दिल कांप उठता है मगर वाह रे मुश्किलकुशा अपने इस बच्चे की बात उस वक़्त कैसी रक्खी! [कुछ ठहर कर] अहा हा। हिंदू मुसलमानों के रिश्तेदारी की बुनियाद

कैसी उमदा डाली गई है अगर इस में पूरी तौर पर काम-याबी हुई तो ख़ान्दान तैमूरिया कभी हिन्दोस्तान से नहीं हट सकता। मगर वाह रे भगवानदास, तेरे बराबर दूर-न्देश कोई काहे को पैदा होगा! हमारी पूरी चाल न जमने पाई जो कहीं हमारे घर की लड़कियां हिन्दुओं के घर जातीं तो सब काम बन जाता, फिर तो इन्हें मुसल्मान बनाने में कुछ भी देर न थी मगर उस दानिशमन्द ने इस चाल को ताड़लिया। अच्छा कुछ मुज़ायक़ा नहीं जाति कहां हैं जो चाल चली है उसी की तरक़्क़ी होने का नतीजा वह भी होगा॥

[कुछ सोच कर] यह हिन्दुओं का मुल्क है, यहां हिन्दू ही बसते हैं इन की बहादुरी का मुक़ाबिला दुनिया में कोई क़ौम नहीं कर सकती, हालां कि इस वक़्त इन पर ज़वाल है मगर कब ख़ुदाताला किस को उरूज देगा इस का कौन ठिकाना? इसलिये जब तक इन के दिल से मुसल्मानों से नफ़रत न दूर की जावेगी, जब तक इन के दिल में बिराद-राना मुहब्बत न पैदा की जायगी तब तक मुमकिन नहीं कि मुसल्मानी सल्तनत को क़याम हो; और यह तब तक मुमकिन नहीं जब तक कि मज़हबी जोश मज़हबी ख़ियालात इनके मज़बूत हैं। मगर क्या बज़ोर शमशेर इनका मज़हबी ख़ियाल तबदील हो सकता है? हर्गिज़ नहीं—बल्कि ख़ौफ़ है कहीं उल्टी आग न भभक उठे। इस को मिटाने, इन को मुसल्मान बनाने की अगर दुनिया में कोई तदबीर है तो यही कि इन से नाता रिश्ता बढ़ा कर इन के दिल से अपनी तरफ़ से नफ़रत दूर करना, इन के मज़हब को तारीफ़ करके, इन को मज़हबी तक़रीबों में शिरकत करके, इन को निगाह में ख़ुद हिन्दू बन कर कुल परहेज़ों को दफ़ा करना। हाय,

हमारे नाआकबतअन्देश मुसल्मान भाई हमारी इस दूरन्देशी पर तो ख़ियाल करते नहीं और हम्हीं से नाख़ुश होते हैं! हाँ—मगर मैं अपनी इस चाल को नहीं तवदील कर सकता। अकबर! अगर तुझ पर ख़ुदा की मेहरबानी हो और पूरी उम्र अता हो, तो तू साबित करके दिखला कि तैंने मुसल्मानी सल्तनत की वेख़ हिन्द में किस क़दर मज़बूती के साथ गाड़ी है और इन काफ़िरों के मज़हब में दीन इसलामिया की बू किस तरह मद्घ कर दी है॥

(एकाएक राजा टोडरमल्ल का प्रवेश)

अकबर। [मन में] यह तो बड़ा ग़ज़ब हुआ; जो कहीं इन्हों ने हमारी गुफ़्तगू सुनी होगी तो बड़ा बुरा हुआ (प्रकाश) आइए राजा साहब, आज इस वक़्त आप कहां?

टोडर। ख़ुदावन्द फ़िदवी एक ज़ुरूरी अम्र में गुज़ारिश करने की ग़रज़ से हाज़िर हुआ है॥

अकबर। फ़र्माइए॥

टोडर। जहांपनाह, हुज़ूर के साया में रऐयत निहायत अमनो अमान से है और शेर व बकरी एक ही घाट पानी पीते हैं, अगर इसे रामराज्य कहें तो भी मुबालिग़ा न होगा, मगर अफ़सोस की बात है मुसल्मान भाइयों के दिल से तअस्सुब रफ़ा नहीं होता और रोज़ नए फ़िसाद उठाते हैं। सुनने में आया है कि ख़िलाफ़ हुक्म बन्दगानेआली आज फिर कुछ शूरा पेश है। जिस से लोग ख़ौफ़ज़दा हो रहे हैं॥

अकबर। राजा साहब, मैं इन अपने भाइयों की नादानी से सख़्त परेशान हूं। आप देखिए, वालिदा माजिदा की वफ़ात में अगर मैंने बाल बनवाए क्या बेजा किया? मगर इन सभों ने कैसा वावैला मचाया। चाहे कोई ख़ुश हो या ना ख़ुश मैं तो हिन्दुओं के मज़हब का क़ायल हूं। जहां तक

मैं हिन्दू वेदान्त शास्त्र में डूबता हूं एक अजीब लुत्फ़ हासिल होता है। मुझे तो अपने क़ौम का मुतलक़ एतबार व भरोसा नहीं। मेरा तो दारोमदार आप ही जैसे रुक्नेसल्तनत पर है। आप लोगों की तशफ्फ़ोदें मैं अभी आकर इन्तिज़ाम करता हूं। अकबर का हुक्म किस की मजाल है जो टाल सके॥

टोडर। ऐ शहन्शाहे आलम, आप इतमोनान रक्खें हिंदू प्रजा का सर हुज़ूरेआली के क़दमों में हमेशः हाज़िर है और आलोजाह, अपने बादशाह से बग़ावत करना तो हिन्दू क़ौम ने सीखा ही नहीं है। ताबेदार इस वक़्त रुख़सत हो?

अकबर। हां आप चलें—मैं भी अभी आता हूं (मन में) शुक्र है इन्हों ने कुछ न सुना। अकबर की दिली इन्दिया किसी को मालूम होनी दिल्लगी नहीं है॥

(टोडरमल्ल का प्रस्थान)

पटाक्षेप

इति द्वितीयांक

तृतीय अङ्क।

प्रथम गर्भांक

(स्थान उदयपुर—महाराज मानसिंह का आतिथ्य—एक सुसज्जित कमरा—महाराज मानसिंह और कुंवर अमरसिंह बैठे हैं। भीमाशा मंत्री और सरदारगण खड़े हैं)

(नेपथ्य में गान)

क्यों तू भरि गुमान इतरात।
इत उत चमकि फूलि निज छवि पै रे खद्योत, इठलात॥
है दिन चार साहिबी तेरी जब ही लौं बरसात।
तापै भानु समान होन को अरे मूढ़ ललचात॥
भानु उदय कहुं देखि न परिहै कोउ न पूछिहै बात।
रविकुल रवि प्रताप के जागे रिपु कुल मानत मात॥ १॥

मानसिंह। (स्वगत) यहां के ढंग कुछ विलक्षण दिखाई देते हैं। यह सब बौछार हम्हीं पर हैं। अच्छा देखें यह अभिमान कब तक ठहरता है। (प्रकाश) आज हम पर राणा जी ने बड़ी कृपा की है और हमारे लिये बड़े सासान किये हैं; परन्तु अब तक आप क्यों नहीं पधारे?

मंत्री। (हाथ जोड़ कर) हुकुम अन्नदाता जी, आज श्री हुजूर का शरीर अच्छा नहीं है, कुंवर जी तो पधारे ही हैं। उन में और इन में भेद क्या है, देखिये शास्त्रों ने भी कहा है "आत्मावै जायते पुत्रः,,

मानसिंह। हां आप का कहना एक प्रकार से अनुचित तो नहीं है पर संसार की रीति जो है वही बरती जाती है यों तो शालिग्राम की बटिया क्या छोटी और क्या बड़ी हमारे तो ये सिरताज ही हैं परन्तु जब तक श्री एकलिङ्ग जी की कृपा से राणा जी वर्तमान हैं इनकी गिनती लड़कों ही में गिनी जायगी, और आप न पधार कर लड़कों को भेजना

अपने घर में आये हुए मेहमान का अनादर करना है। आप हमारी ओर से राणा जी से विनती कीजिये हमारी जो कुछ भूल चूक हो क्षमा करें और पधारें जब तक आप न पधारेंगे हम मुंह में ग्रास न देंगे ॥

मंत्री। नहीं धर्मावतार आप को ऐसा न समझना चाहिये यह बात नहीं है। श्री जी हुजूर के माथे में दर्द न होता तो वे अवश्य ही पधारते ॥

मानसिंह। (दर्प के साथ मोंछ पर हाथ फेरता हुआ) माथे में जिस कारण से दर्द है हम खूब समझते हैं। राणा जी ने अपने घर में आये हुए हमारा अपमान किया पर हम अन्न का अनादर न करके सिर चढ़ाते हैं [चावल के दाने पगड़ी में रख कर] याद रखना इस माथे के दर्द की दवा लेकर हम बहुत जल्द फिर आवेंगे और तब दिखावेंगे मानसिंह का अपमान करना कैसा होता है ॥

(चलने को उद्यत होते हैं)

[प्रतापसिंह वेग के साथ आते हैं]

प्रतापसिंह। सुनो महाराज मानसिंह :—

जिन कुल की मरजाद लोभ बस दूर बहाई।
जीवन भय जिन खोइ दई आपनी बड़ाई॥
जिन जग सुख हित करी जाति की जगत हंसाई।
लखि जिन को मुख वीर सबै सिर रहे नवाई॥
तिन के सँग खानो कहा मुख देखतहू पाप है।
जाइ सीस बरु धर्म हित यह सिसौदिया थाप है॥

अच्छा अब आप सुख से पधारिए और अपने हिमायती के साथ शीघ्र ही फिर हमारी अतिथिसेवा रणक्षेत्र में स्वीकार कीजिये यही प्रार्थना है॥

[मानसिंह क्रोध के साथ राणा की ओर

देखते हुए जाते हैं]

प्रतापसिंह। मंत्री!

यह पवित्र थल जेहि न विधर्मी छाया दरस्यो।
ताहि आज या कुलकलंक नैं पायन परस्यो॥
तातें याहि धुवाइ शुद्ध गङ्गोदक छिरकौ।
नाना विधि दै धूप वायु के मल कों हिरकौ॥
हमहु सवत्सा गाय दान विप्रन को देहीं।
मुख देखन को पाप प्रायश्चित निज कर लेहीं॥
अहो वीरगण निर्भय रहौ सचेत सदाई।
निज पवित्र पुरुषारथ को फल देहु चखाई॥
रहै धर्म तौ प्रान नहीं जौ धर्म प्रान नहिं।
कोउ न कहै नहिं रहे वीर क्षत्री भारत महिं॥
बहु देसनि करि विजय व्याहि अधमन की बाला।
अकबर को मन बहकि रह्यो धन मद एहि काला॥
गर्व खर्व करि थापि आपुनो हांक तासु जिय।
अहो बहादुर चूकौ जिन अवसर न हाथ दिय॥
जहँ साहस जहँ धर्म जहां सांचे सब सँगी।
तहीं विजय निहचय तासों सब होइ इकङ्गी॥

सब। महाराज, ऐसा ही होगा। (पटाक्षेप)

द्वितीय गर्भाङ्क।

[स्थान उदयपुर, राणा चिन्तितभाव से बैठे हैं और पुरोहित सामने बैठे हैं]

प्रताप। पुरोहित जी! कल का वृत्तान्त तो आपने सुना ही होगा अब बहुत शीघ्र मेवाड़ में समराग्नि भभकना चाहती है॥

पुरोहित। हुकुम अन्नदाता जी, मैंने सब सुना। मुझे तब से बड़ी चिन्ता है॥

प्रताप। चिन्ता किस बात की है? क्या आप प्रतापसिंह को निरा असमर्थ समझते हैं?

पुरोहित। नहीं अन्नदाता जो, मैं ऐसा कभी नहीं समझता परन्तु मुझे इस लड़ाई में देश को महान् दुर्दशा दिखाई पड़ती है इस से मैं निवेदन करता हूं कि अब भारत वर्ष में मुसल्मानों की जड़ ऐसो जम गई है कि इसे निर्मूल करना कठिन ही नहीं वरञ्च असम्भव है, फिर व्यर्थ बैठे बिठाए देश को उजाड़ करने से क्या लाभ? अब हमारा उन का चोली दामन का साथ है, अब तो ऐसे उपाय करने चाहिए जिन से आपस में भ्रातृभाव बढ़े॥

प्रताप। पुरोहित जो! आप का कहना बहुत ठीक है पर आप ने इस का पूरा वृत्तान्त नहीं सुना है इसी से ऐसा कहते हैं नहीं तो कदापि ऐसा न कहते। प्रतापसिंह क्षत्रिय सन्तान है—क्षत्रियों का यह काम नहीं है कि व्यर्थ परमेश्वर की सृष्टि को नाश करें और उस के आगे अपराधी बनें, दूसरे हम लोग हिन्दू हैं हम लोगों का धर्म अत्यन्त उदार भाव पूर्ण है, प्राणी मात्र की रक्षा करना हमारा धर्म है फिर यह क्योंकर सम्भव है कि हम ईर्षा वश विधर्मी लोगों को नाश करें क्या वे लोग उसी जगत्पिता के सन्तान नहीं हैं? परन्तु महाराज, हमारे क्रोध का कारण दूसरा ही है हमारा यह कर्तव्य अवश्य है कि हम अपने धर्म और अपने देश की रक्षा करें। जब कोई हमें छेड़ेगा हम कभी चुप नहीं रह सकते। देखिए हमारे पुरुषों ने जिस चितौरगढ़ के लिये निः-संकोच अपना प्राण अर्पण किया। जिस का गौरव अपने, प्राण से बढ़ कर पुत्र रत्न को गँवाकर भी नष्ट नहीं होने दिया, उसो चितौरगढ़ पर—उसी परम पवित्र आराध्य चितौरगढ़ पर मुसल्मानी झण्डा फहराए और हम उसे

सुख से देखें! हमारे आर्य भाइयों को मुसल्मान बनावें और हम आंख बन्द करलें?

पुरोहित। धर्मावतार, यह आप ठीक आज्ञा करते हैं परन्तु जगदीश्वर को यदि यही अभीष्ट है तो हम लोग क्या कर सकते हैं? पृथ्वीनाथ, देखें श्रीमद्भागवत ही में आज्ञा हुई है कि इन के पीछे गौरांडों का राज्य होगा फिर जब भारत के भाग्य में ऐसा ही लिखा है तो व्यर्थ बैठे बिठाए अपने ऊपर झगड़े खड़े करने से क्या लाभ?

प्रताप। पुरोहितजी, यह आप क्या कहते हैं? क्या यह समझ कर कि कल तो हम को मरना ही है आज ही से खाना पीना छोड़ देना उचित है? आप निश्चय रखिए अब जो आवैंगे इन से अच्छे ही आवैंगे। एक यूरोप का विद्वान अकबर के दर्बार में है अनुमान होता है गौरांड जाति का ही वह है; उसकी बड़ी प्रशंसा सुनने में आई है, वह दिन भारत के सौभाग्य का होगा जिस दिन इन सभों के हाथ से यह राज्य निकल जायगा, परंतु क्या यह सब सोच विचार कर आजही से हमको निराश होकर अपने राज्य को कौन कहै अपना धर्म भी उसे सौंप देना चाहिये? क्या आप आज्ञा देते हैं कि उसकी प्रार्थनानुसार राजकुमारी का विवाह उसके बेटे के साथ कर दिया जाय?

पुरोहित। हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, ऐसा भी कभी हो सकता है? उस दुष्ट की इतनी बड़ी स्पर्द्धा है? महाराज, उसे तब तो अवश्य ही समुचित दंड देना चाहिए॥

प्रतापसिंह। गुरुदेव,

जेहि मुख तें ये बैन भरे अभिमान निकारे।
शिशोदिया कुल करन कलङ्कित बचन उचारे॥
करि वश क्षत्रिय कुलकलङ्क है चार बिचारे।

बढ़ि बढ़ि बोलत जौन आजु सब शंक निवारै॥
जबलौं तिनकों मसलि नहिं तुव पद गेंद बनाइहौं।
तबलौं हे गुरुदेव नहिं सुख सों दिवस बिताइहौं॥१॥

पुरोहित। अन्नदाताजी आप सब कुछ कर सकते हैं। श्री एक-लिंग जी आप पर प्रसन्न हैं। हमारी इच्छा है कि हम लोग सब से पहिले श्री एकलिंग जी की सेवा में यह सब निवेदन करके इस उपलक्ष में आज पूजन करें।

प्रताप। अवश्य, चलिए। (दोनों का प्रस्थान)

तृतीय गर्भाङ्क॥

(उदयपुर के एक सुन्दर उद्यान में पुष्पित गुलाब के वृक्ष के निकट एक सुन्दरी खड़ी है और दूर पर एक कुंज की ओट से एक युवा पुरुष अलक्षितभाव से अतृप्त नेत्र उसकी ओर देख रहा है*)

सुन्दरी। (एक फूल तोड़कर)
अरे तेरे कोमल तन पर वारियां।
मधुर रंग माधुरी गंध पैं तन मन भई बलिहारियां॥
झलक लखत वाकी तुव अंग मैं, मैं तो भई मतवारियां।
तुव मिलाप मैं कंटक जे वे, कसक कसक उर फारियां॥
अहा, गुलाब, तेरा रूप जैसा सुन्दर है नाम भी वैसा ही मनोहर है और मेरा तो जीवन का मूल कारण ही है। प्यारे गुलाबसिंह, देखो तुम्हारे वियोग के दिनों को इन्हीं गुलाबों के साथ काटती हूं। येही मेरे आराध्य देव हैं। आहा, कहीं येही गुलाब गुलाबसिंह हो जाते।

युवा। (कुंज की ओट से)
'या आसा अटक्यो रहै अलि गुलाब के मूल।

---

* गुलाबसिंह और मालती के चरित्र से ऐतिहासिक कोई सम्बन्ध नहीं है॥

फिर बसन्त ऐहैं सखी इन डारन तरु फूल ॥ १ ॥'

सुन्दरी । (चकपकाकर) हैं, यह अमृतवर्षा कहां से !

युवा । (कुञ्ज की ओट से)

अरे कोउ मधुकर की सुधि लेहु ।

घायल तलफत प्रान गँवावत तेहि बिसारि जिनि देहु ॥

रे मालति तुव बिरह भौंर भटकत वन वन तजि गेहु ।

राखि लेत किन बरसि दया करि प्रेमसुधा घनमेहु ॥ १ ॥

सुन्दरी । वाह यह तो वह स्वर जान पड़ता है जिसकी झंकार सदा मेरे हृदय में गूंजा करती है (युवा को कुञ्ज की ओट से निकल कर धीरे २ अपनी ओर आते देखकर घबराई हुई दांतों के नीचे उँगली दाब कर) हैं तो गुलाब सिंह ही। हाय, मैंने आज तक अपने हृदय के भाव को कैसी कठिनाई से छिपा रक्खा था, पर आज अनायास वह प्रकाश हो गया। अब क्या करूं (लज्जा के साथ वस्त्र को सँभाल कर उँगली दांत के नीचे दाबे दूसरे हाथ में लिये गुलाब की ओर नीची दृष्टि से देखती पुतली की भांति—कुछ मुड़ कर—खड़ी हो जाती है)

गुलाबसिंह । (सुन्दरी के पास आकर उत्कण्ठित भाव से) प्यारी मालती, अब कब तक भटकाओगी ? हाय, तनिक तो जी में दया बिचारो !

मालती । (उसी भाव से) गुलाबसिंह, तुम क्यों दुःख उठाते हो ? इस उद्यान में बहुत से सुन्दर फूल हैं किसी और की ओर जी लगाओ इसकी आशा छोड़ो ॥

गुलाबसिंह ।

चातक स्वाती तजि कबौं अमृतहू परसै न ।

ताकी गति जग और को जेहि मारे तुव नैन ॥ १ ॥

मालती। (गुलाब सिंह की ओर फिर कर) गुलाबसिंह, मैंने बहुत चाहा था कि अपने जी के भाव को तब तक छिपाऊं जब तक अवसर न पाऊं पर क्या करूं आज दैवयोग से वह आपही प्रकाश हो पड़ा। मैं क्या करूं मेरी तो प्रेम और नेम के बीच में सांप छछूंदर सी गति हुई। मैं चत्राणी हूं इससे अपनी प्रतिज्ञा से लाचार हूं और इसी से तुम्हें निराश होने के लिये कहती हूं॥

गुलाबसिंह। क्या मैं उस प्रतिज्ञा को सुन सकता हूं?

मालती। हां हां उसके सुनने के अधिकारी तुम्हीं तो हो सुनो :—

प्रबल शत्रु दल दलि निज बल मेवार बचावै।
म्लेच्छ रुधिर प्यासो भुव की जो प्यास बुझावै॥
आर्य धर्म की धुजा गगन कों भेदि उड़ावै।
चत्रिय कुल मेवाड़ देश को नाम बढ़ावै॥
ताको सेवा करन मैं बड़भागिनि सुख पाइहौं।
नहिं तौ यह जीवन सदा इकली बैठि बिताइहौं॥

गुलाबसिंह। (आवेश से) अच्छा तो आज मैं भी जो प्रतिज्ञा करता हूं उसे सुन रक्खो :—

जब लौं निज बल को फल इनकों नाहिं चखाऊं।
म्लेच्छ धुजा कों काटि न जब लौं भूमि गिराऊं॥
आर्य धर्म की जय धुनि सों सब जगत कंपाऊं।
निष्कंटक मेवार देश जब लौं न बनाऊं॥
तब लौं मुख करि सामुहें तुमसों कबहुँ न भाषिहौं।
अरु कोमल कर परस कों मन मैं नहिं अभिलाषिहौं॥

(वेग से जाता है और मालती अतृप्त नैन से उसकी ओर देखती है)

चतुर्थ गर्भाङ्क।

(स्थान उदयपुर राजपथ, गुलाबसिंह का
चिन्तितभाव से प्रवेश)

गुलाबसिंह। भूलि जिय काह्न सों न लगै।
जबलौं रहै, रहै निज बस को दूजी सों न पगै॥
पगै तो वाही संग पगै जो अपुने रंग रंगै।
दई निरदई प्रेममई सों कबहूं नाहिं पगै॥ १॥
हाय, आज कितने दिनों की बंधी कितनी आशा और अ-
भिलाषा को उसने एक दम में पलट दिया! प्यारी मालती!
भला अपने इस व्याकुल प्रेमी की दो दो बातें तो सुन ली
होतीं, इस के दुःखों की कहानी तो अपने कानों तक पहुंच
लेने दी होती, जी भर के एक बेर देख तो लेने दिया होता,
तूने तो ऐसी लट्ठ सी मार दी कि मेरे सभी हौसले पस्त हो
गये० (कुछ ठहर कर) और मैं ही धीरज धर कर दो दो बातें
कर लेता तो क्या होता! पर हाय! मैं क्या करता उसकी
प्रतिज्ञा सुनकर मैं अपने आपे में तो था ही नहीं कहता
क्या और सुनता क्या! उस स्वाभाविक वेग को संभालना
मेरे सामर्थ्य के बाहर था। अच्छा अब जो हुआ अच्छा ही
हुआ अब तो जो प्रतिज्ञा की है उसे पूरी करने का उद्योग
करना चाहिये॥

(वीरसिंह का प्रवेश)

वीरसिंह। यह आज आप बे पेंदो के लोटे की तरह क्यों लुढ़क-
ते फिरते हैं॥

गुलाबसिंह। कुछ तो नहीं।

वीरसिंह। कुछ तो नहीं क्या? "कछु पिय सों खटपट भई टप-
टप टपकत नैन" का मामला दिखाई देता है—क्यों यार
कैसा ताड़ा?॥

गुलाबसिंह। (हंसकर) तुम्हें सदा हंसी ही सूझती है—खटपट

किस बात की ?

वीरसिंह। यह जानो तुम—यहां तो सदा पौ बारह हैं।

गुलाबसिंह। अच्छा अब यह मसखरापन रहने दो—हमारी इच्छा है कि आज दिल्ली चलें॥

वीरसिंह। क्यों ? क्या उधर से यह आज्ञा मिली है ?

गुलाबसिंह। देखो हर समय की हंसी अच्छी नहीं होती यहां तो न जाने क्या बीत रही है और तुम मानते ही नहीं॥

वीरसिंह। यह न कहिये— "जादू वह जो सिर पः चढ़ के बोले" मैंने तो पहिले ही कहा था॥

गुलाबसिंह। तुम्हें हाथ जोड़ते हैं तंग न करो, यह बताओ तुम हमारे साथ दिल्ली चलोगे या नहीं ?

वीरसिंह। सुनो भाई हम तो तुम्हारे साथ नर्क में भी चलने को तैयार हैं, पर बिना तुम्हारा मतलब सुने न आप जाऊंगा न तुम्हें जाने दूंगा॥

गुलाबसिंह। मतलब क्या ? तुम नहीं जानते कि महाराज मानसिंह यहां से चिढ़ कर गये हैं ?

वीरसिंह। तो फिर, तुम्हें क्या ?

गुलाबसिंह। अजी वहां जाकर एक की अट्ठारह लगावेंगे और न जाने क्या उपद्रव उठावेंगे, चलो आगे से उस की खबर छिप कर ले आवें॥

वीरसिंह। हां तो मैं चलने को तैयार हूं (मन में) ऐसेही तो खबर लानेवाले थे, आज जान पड़ता है उधर से मुंह की खाई तो जी में यही समाई (प्रगट) अच्छा तो ज़रा घरवालों से भी बिदा हो लूं॥

गुलाबसिंह। हां हां, पर शीघ्र आना॥

वीरसिंह। अभी आया, और तुम भी ज़रा उधर (आंख मटकाता है)

गुलावसिंह। चल लुच्चे--(ढकेलता है, एक ओर से वीरसिंह हँसता हुआ और दूसरी ओर से गुलावसिंह कुछ अप्रतिभ सा होकर जाता है)

(पटाक्षेप)

इति तृतीय अङ्क।

चतुर्थ अङ्क

प्रथम गर्भाङ्क।

[स्थान श्रीवृन्दावन, तानसेन के पीछे २ रूत्यवेश में तानपूरा लिये हुए अकबर का प्रवेश]

तानसेन। [अकबर की ओर फिर कर] जहांपनाह यह बड़ाही ग़ज़ब कर रहे हैं ॥

अकबर। तानसेन ! चुप भी रहो, कोई जान लेगा तो फिर सब लुत्फ़ जाता रहैगा। आहा ! तानसेन, यहां तो कुछ जी ही और हुआ जाता है, गैर मज़हब होने पर भी यहां की मिट्टी में लोटने को जी बेतरह चाहता है और इन भोलीभाली व्रजवासिनियों की सहज बातें तो तान सुर को मात करती हुई जी को खींचे लेती हैं, [चौंक कर] वह देखो मोर बोला और जी में कुछ और ही झलक सी झलकी ॥

तानसेन। खुदावन्द ! मैं हुजूर से ग़लत थोड़ही अर्ज़ करता था, यह ज़मीन कुछ और ही है और फिर जब हुजूर मेरे गुरू जी महाराज श्री स्वामी हरिदासजी का दर्शन करेंगे उम्मेद है तबीयत ही दूसरी हो जायगी ॥

अकबर। भाई, उनके इश्तियाक़ ने तो मुझे बावलाही बना रक्खा है, उन्हीं के दर्शन के लिये तो यह सूरत बनाई है० [आगे की ओर देख कर] वह देखो चन्द व्रजवासिनी गाती हुई जल भरने के लिये इधरही की ओर आ रही हैं० वाह वाह ! क्या समा है, धन्य व्रजगोपिका धन्य !

[दोनों एक किनारे खड़े हो जाते हैं कुछ व्रज वासिनी सिर पर घड़ा लिये गाती हुई आती हैं]

व्रज बासिनोगन— (गीत)

" माई री नेकु न निकसन पैये ।
घाट बाट पुर बन बीथिन मैं जहाँ तहीं हरिपैये ॥
उत सुनियत इत को चलियत ह्व मन वाही पै जैये ।
ब्रह्मदास छूटिये कहां लौं कान्ह मई व्रज मैये ॥१ ॥

एक व्र० अरी बीर !

दूसरी व्र० का कहै है बीर !

पहिली व्र० । अरी नेक पांव बढ़ाए चल, या व्रज मैं ऊधमी को राज ठहर्यो कहूं काहूपै दीठ न परि जाय—सिदौसिए घर कूं चल

तीसरी व्र० । हम्बे बीर— चल ॥

(सब जाती हैं)

तानसेन — (विह्वल होकर) खुदावन्द ! इस व्रजभूमि के रूप को हुजूर ने देखा ? धन्य हैं उनके भाग्य, जिन्हें व्रज रज नसीब हो ॥

अकबर— तानसेन ! आज तुमने मुझ पर बड़ा इहसान किया, आज तुम्हारी बदौलत मुझ से नापाक बद बख़्त को भी व्रज रज नसीब हुआ । धन्य है बीरबल को, जिनका काव्य ये व्रज गोपिका गाती हैं ॥

तानसेन— इस में तो शक नहीं । हुक्म हो तो तावेदार इस वक़्त हस्ब हाल कुछ सुनावे ।

अकबर— ज़रूर—मैं तानपूरा छेड़ता हूं ।

तानसेन—

"नैन मांगौं इन्द्रसों जासों दरसन करौं अघाय अघाय ।
रसना मांगि लेहुं सहस फनसां जासों गोविन्द गुन गायो जाय
लङ्कपती सों सोस मांगि लेहुं जो बन्दन करूं बनाय बनाय ।
सहस बाहुसों भुजा मांगि लेहुं तानसेन के प्रभु परसन कों पाय

(पटाक्षेप)

——

द्वितीय गर्भाङ्क

(स्थान दिल्ली—राज्यपथ)

(एक हिन्दू और एक मुसल्मान नागरिक का प्रवेश)

मुस०। (हिन्दू को देखकर बड़े प्रेम से सलाम करके) अख्खाह भाई बिहारीलाल ! आज तो बाद मुद्दत के मुलाक़ात हुई। कहिये सब ख़ैरियत तो है।

हिन्दू। (प्रेम पूर्वक मुसल्मान का कर स्पर्श करके) आपकी दया से सब ख़ैरियत है। क्या कहैं भाई मिरूअली ! काम काज की भीड़ में छुट्टी तो मिलतीही नहीं क्या करैं कहां जांय ? अपनी ख़ैरसलाह ख़ैरआफ़ियत कहिये ?

मुस०। (सलाम करके) शुक्र है— कहो दोस्त आज कल रोज़गार का क्या हाल है ? .

हिन्दू—भाई परमेश्वर इस मुसल्मानी बादशाहत को क़ायम रक्खेऔर हमारे बादशाह सलामत को उम्र दें इन दिनों जैसे आनन्द से दिन कटते हैं कुछ कह नहीं सकते बेखटके खूब रोज़गार करते हैं और खूब बरकत होती है॥

मुसल्मान०। इस में तो शक नहीं—भाई साहब हमारा तुह्मारा तो चोली दामन का साथ है—अगर हमारे हाथ से तुम्हें कोई ईज़ा पहुंचो तो तुफ़ है हम पर ! चंद नाआक़बत अन्देश बादशाहों ने तुम लोगों को कुछ ईज़ारसानी की थी अब खुदा चाहैगा तो मुसल्मानी सल्तनत में हिन्दुओं को बहुत आराम मिलेगा॥

हिन्दू०। परमेश्वर ऐसाही करै—भाई हम लोग तो राजभक्त प्रजा हैं—हमारी यह इच्छा नहीं कि हम राजगद्दी पर बैठें, हम तो अपने राजा को चाहे वह कैसा हो क्यों न हो

ईश्वर का अवतार ही समझते हैं, हां ज़रा हम से चुमकार कर बोलिये हम प्रसन्न हो जांय, डांट दीजिए हम मन ही मन मसूस कर रह जांय, देखिये पंडित राज ने हमारे हज़रत सलामत के बारे में क्या अच्छा कहा है: ॥

"दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा,,

और हम लोगों का यही विश्वास भी है ।

मुस० । भाई हमारे बादशाह सलामत तो तुम्हीं लोगों के भरोसे शाही करते हैं और तुम्हारे ही बल पर नाज़ां हैं, देखो आधे से ज्यादा वज़रा हिन्दू ही हैं, महाराज टोडर मल, महाराज बीरबल, महाराज मानसिंह, राजा मधूशाह वग़ैरह कैसे कैसे दक़ाक़ और ख़ैरख़ाह वज़ीर हैं, और लुत्फ़ तो यह है कि इनके हाथ से जो इन्साफ़ और फ़ैज़ मुसल्मान रऐयत को मिलता है वह मुसल्मान वज़रा से नहीं, ख़ुदा हम दोनों हिन्दू मुसल्मानों की मुहब्बत यों ही ता व अबद निबाह दे ।

हिन्दू । तथास्तु, सुना है आज दर्बार में बड़ा जशन होगा, महाराज मानसिंह दक्खिन फ़तह करके आते हैं, चलिये न हम लोग भी ज़रा दर्शन कर आवैं ।

मुस० । बिस्मिल्लाह तशरीफ़ ले चलिये ।

(एक ओर से ये दोनों जाते हैं, दूसरी ओर से चारन के वेश में गुलाबसिंह और बीरसिंह का प्रवेश)

गुलाबसिंह । वीरसिंह, दिल्ली की शोभा अकथनीय है, ऐसा सुन्दर और श्रीमान् नगर तो इस समय संसार में दूसरा कोई न होगा। यह चौड़ी सड़क आकाश से बात करनेवाले महल मन को प्रसन्न किये देते हैं ।

बीरसिंह । इसी लिए मैं दिल्ली नहीं आता था मैं तो पहिले ही से जानता था कि कहीं आप का बिगड़ैल जी किसी महल

में न मचल जाय, सो कुछ लक्षण दिखाई देने लगा ॥

गुलाबसिंह। तुम तो एक विलक्षण मनुष्य हो, कोई बात ही ऐसी न बोलोगे कि जिस में व्यंग न हो।

वीरसिंह। अच्छा लो अब हम न बोलेंगे हमारी बात तुम्हें नहीं सुहाती तो हम बोलेंहीगे नहीं।

गुलाबसिंह। (उंगली से दिखाकर) वीरसिंह। देखो वही वीर वर पृथ्वीराज का कीर्तिस्तम्भ जान पड़ता है, हाय!

वीरसिंह। (मुंह फेर कर—चुप)

गुलाबसिंह। वीरसिंह! इधर देखो।

वीरसिंह। [निश्चल]

गुलाबसिंह। हाथ जोड़ते हैं अब कुछ न कहेंगे ज़रा इधर तो फिरो।

वीरसिंह। [और भी हट गया]

गुलाबसिंह। सुनते हो कि नहीं?

वीरसिंह। [चुप]

[नेपथ्य में]

सावधान सब लोग होहु निज पद अनुसारा।
मिले धूर सें सहज जौन मरजादहिं टारा।
देश देश बस करत बाहु बल अरिहिँ पखावत।
दिल्लीपति मरजाद थापि मन मोद बढ़ावत॥
करि विजय सत्रु दल दलनकरि मानमहीपति आवहीं।
कर कुसुम लिये सुरवधूजन चढ़ि बिमान जस गावहीं॥

गुलाबसिंह। जान पड़ता है महाराजा मानसिंह दर्बार में जाते हैं तो अब हम लोगों को भी शीघ्र चलना चाहिये।

[दोनो जाते हैं]

—

तृतीय गर्भाङ्क ।

(स्थान शाही दर्बार)

(अकबर सिंहासन पर विराजमान है दोनों ओर
सफ़ बांधे राज्य पारिषदगन खड़े हैं कई
एक नर्तकी गान और नृत्य कर रही हैं
बड़ा प्रकाश और बड़ी तयारी है)

वढ़े औज इस तख़ का या इलाही ।
दुरख़्शां रहे कौकबे बख़ेशाही ॥
उदू होवें पामाली मग़लूब शहके ।
पड़े उनके सर पर सरासर तबाही ॥
रहे हुक्मरां सबका अल्लाह अकबर ।
जहां में जहां तक कोई होवे राही ।
तेरे सायए फ़ैज़ से बहर:वर हों ।
हैं मख़्लूक जो माह से ता ब माही ॥

अकबर । आज निहायत खुशी का दिन है, हमारे कूवते बाज़ू महाराज मानसिंह आज वह काम करके तशरीफ़ लाते हैं जो कि ख़ास हम भी शायद न कर सकते। सूबए दक्खन, का फ़तह करना कोई दिल्लगी न थी, यह काम महाराज मानसिंह ही के हिस्से का था (दर्बारियों से) जिस वक़्त महाराज तशरीफ़ लावें आप सब लोग उन्हें मुबारक बादी दें ॥

सब । बजा इर्शाद ख़ुदावन्दे आलम ॥

अकबर । मगर देर बहुत हुई, महाराज के सवारी की ख़बर तो बहुत अर्सा हुआ आई थी ?

(नेपथ्य में)

सावधान दिगपाल संभारहु निज दिसान कों ।
हे नच्छत्र थिर रहौ सकल निज निज सुथान कों ॥

अहो सिंधु मरजाद गहो जो चहो मान कों।
हे अभिमानी वीर भगो चाहो जु प्रान कों॥
निज भुज बल जग बस करत कायर हृदय कंपावहीं।
विजय लच्छमी लुठत पद मान महीपति आवहीं॥ १॥
अकबर। वह महाराज आगये॥
चोबदार। (स्वर से) निगाह रूबरू जहांपनाह सलामत॥
(महाराज मानसिंह का प्रवेश)
अकबर। (अर्धाभ्युत्थान देकर) मुबारक महाराज, दक्खन की फ़तह आप को मुबारक॥
(सब लोग इसी को दोहराते हैं)
मानसिंह। (महा क्रोध के साथ पगड़ी को अकबर के सामने पटक कर कंपित स्वर से)
रहे मुबारक यह मुबारकी शाहनशाहा।
बढ़े औज शबरोज़ तख़्त का जहां पनाहा॥
दुश्मन हों पामाल आप के आली जाहा।
रैयत हों दिलशाद दुआगो ऐ नरनाहा॥
इस गुलाम नाचीज़ को ख़ता बख़्श सब दीजिए।
रज़ाबख़्श के अब हमें इज़्ज़त बख़्शी कीजिए॥ १॥
अकबर। (आश्चर्य और क्रोध के साथ खड़े हो कर) इसके मानी क्या हैं महाराज? हमलोग आज आपकी फ़तहयाबी पर कैसी खुशियां मना रहे हैं, और आप ऐसे रञ्जीदः हो रहे हैं। फ़र्माइए तो किस नाकाम का काम आज पूरा होने वाला है, जिसने सिंह की गुफा में जान बूझ कर हाथ डाला है?
कहिये तो दिल को आप के है किसने दुखाया।
खुद जान बूझ मर्ग को है किसने बुलाया॥
अकबर के तेग़ तेज़ को है किसने भुलाया।

नाम उसका हमें जल्द कहो वक्त खुदाया ॥
उसको हम एक आन में पामाल करेंगे।
उसके लहू से तेग़ के दामन को भरेंगे ॥ १ ॥

मानसिंह। खुदावन्द। इस दुनिया में सिवाय अभिमानी प्रतापसिंह के और कौन जन्मा है जो हुजूर के ग़ज़ब से न डरता हो?

पृथ्वीराज। (मन में) सच है, सिंह का कान सिंह ही खुजलाता है ॥

अकबर। (मानसिंह को पगड़ी अपने हाथ से पहिरा कर] क्या प्रतापसिंह का दिल इतना बढ़ गया है कि उसने महाराज मानसिंह का अपमान किया? सच है चिंवटे की जब मौत आती है उसे पर जम जाते हैं फ़र्माइये तो हुआ क्या?

मानसिंह। खुदावन्द, मैं दक्खिन से लौटने के वक़्त उदयपुर के रास्ते आया० राणा ने बड़ी तयारी के साथ मेहमानी की मगर मेरी बे इज़्ज़ती की ग़रज़ से खाने में खुद न शरीक हो कर अपने कुंअर को भेज दिया और जब मैंने खुद आए बगैर खाने से इन्कार किया तो बड़े तैश के साथ आकर बोले कि जिसने अपनी बहिन मुसल्मान के साथ व्याही उसके साथ मैं कभी नहीं खा सकता० [क्रोध से आंखें लाल हो जाती हैं]

पृथ्वीराज। [मन में] धन्य प्रतापसिंह धन्य! तुम्हारे सिवाय और किसमें इतना जात्याभिमान है?

अकबर। (क्रोध से कांपता हुआ) प्रताप को इतनी बड़ी जुरअत हो गई। उसको इस बात का ग़र्रा है कि अब तक उसकी लड़की इस खान्दान में नहीं ली गई! खैर— (मुहब्बतखां की ओर) आप उदयपुर पर चढ़ाई का

सामान बहुत जल्द करैं देखा जायगा प्रतापसिंह का कितना प्रताप है ॥

(एक चोबदार का प्रवेश।)

चोबदार। (हाथ जोड़कर) खुदावन्द! दो परदेसी फ़र्यादी आये हैं कहते हैं उन लोगों को उदयपुर के राणा ने लूट लिया है ॥

अकबर। हाज़िर लाओ।

(चोबदार का जाना और एक जवहिरी तथा एक पोर्तुगीज़ फ़िरंगी को साथ लेकर आना)

अकबर। तुम लोग कौन हो।

पोर्तुगीज़। खोडावंड, अम पोर्टुगीज़ हैं, अमारा नाम अगस्टाडून है। अमारा गोआ के गवर्नर ने अमको हजूर के लिये बहुट सा नजर लेकर भेजा टा, राह में उडयपुर के राना ने अमको लूट लिया, बोला अमारे सिवाय बाडशाह कौन है, यह नजर अमारा है॥

जवहरी (हाथ जोड़कर) जहांपनाह! फ़िद्वी जवहिरी है बहुतसे बेशक़ीमत जवाहिरात लेकर हुजूर को मुलाहिज़ा कराने के लिये आता था। मैं यह समझकर कि हुजूर के अहदेहुकूमत में किसकी मजाल है जो शाही रयैयत पर आंख उठाएगा, बेखटके आ रहा था मगर रास्ते में उदयपुर के राणा ने मेरा सब माल लूट लिया। हाय! अब मैं क्या करूं ॥

अकबर। तुम लोग घबराओ मत, अब उसका प्याला लबरेज़ हो गया बहुत जल्द वह अपनी सज़ा पाएगा और तुम लोगों की हालत पर भी खियाल किया जायगा। (मानसिंह से) महाराज, बिहतर होगा कि आप भी मुहब्बतखां के साथ तशरीफ़ ले जायँ और उस

नाबकार को उसके किर्दार का मज़ा चखाएं॥

मानसिंह। जो हुक्म खुदावन्दे आलम!

तबही लों सब दाप, जब लौं दीठ न तुव फिरी

कह बापुरो प्रताप, कोपे अकबरशाह जब॥

सब। आमीं, आमीं,

(पटाक्षेप)

चतुर्थ गर्भाङ्क

(स्थान दिल्ली में पृथ्वीराज का घर)

(पृथ्वीराज, गुलाबसिंह और बीरसिंह आते हैं)

पृथ्वीराज। यहां का हाल तो तुमने छिप कर अपनी आंखों से देखही लिया, अब तुरंत उदयपुर जाओ और राणाजी को समाचार दो। यहां की फ़ौज पहुंची जानो। हमारी ओर से निवेदन करना कि सारे क्षत्रियों ने तो डुबाही दी है अब केवल मान मर्याद आपही के हाथ है, सो आप दृढ़ रहैं कहीं से डिगैं नहीं श्री एकलिंगजी की कृपा से सब अच्छा हो होगा। और यहां मैं आप का सेवक हई हूं, बराबर यहां के समाचार देता रहूंगा॥

गुलाबसिंह। कुंअरजो, आप किसी बात की चिन्ता न करैं। प्रतापसिंह क्षत्रिय वंश का नाम हँसाने न देंगे। उनके हाथ में शस्त्र ग्रहण की सामर्थ्य है। मैं अभी जाता हूं रात दिन चल कर पहुंचूंगा और आपका संदेसा ठीक समय से पहुंचाऊंगा, पर आप एक पत्र भी दें तो बहुत अच्छा हो॥

पृथ्वीराज। अच्छा मैं पत्र लिख देता हूं। तुम कहीं रुकना मत सोधे चले जाना॥

(पत्र लिखता है)

वीरसिंह। भाई गुलाबसिंह, तुम दर्बार से सिपारस करके महाराज मानसिंह को मिहमान्दारी हमें दिला देना॥

गुलाबसिंह। तुम क्या मेहमानी करोगे?

वीरसिंह। अजी देखही न लेना, (हाथ मे दिखाकर) यह बड़े बड़े तो बारूद के लड्डू खिलाऊंगा और आबे खञ्जर का जल पिलाऊंगा, जब पेट भर अघा जांयगे खूब स्वच्छ चमकता हुआ तिलक करके हाथ में नारियर देकर बिदा करूंगा॥

(सब लोग हँसते हैं)

गुलाबसिंह॥ तुम्हें सदा दिल्लगी ही की सूझती है॥

वीरसिंह। अच्छा न सही, तुम्हीं उनकी ख़ातिरदारी करना जिस में दिल्लगी न हो सो करना॥

पृथ्वीराज। (पत्र देकर) अब आप लोग बिना बिलम्ब किये चले जांय और खूब सावधान रहैं॥

(दोनों चलने को उद्यत होते हैं)

(नेपथ्य में)

जय जग जननि उदार, दनुज दलनि भवभय हरनि।
लै खप्पर तरवार, रच्छा निज जन की करहु॥

पृथ्वीराज। अहा! शकुन तो बहुत अच्छा मिला। मा! कब तक चुपचाप बैठी रहोगी? कब तक अपने सन्तानों की दुर्दशा देखती रहोगी? अब उठो, मौन साधने का समय नहीं है, (खड़े होकर) देवीजी की आरती का समय है चलैं हम भी प्रार्थना करैं॥

(प्रस्थान)

पंचम गर्भाङ्क।

(दिल्ली, मुसल्मानों की गोष्ठी)

एक मुसल्मान। यार हम लोगों को तो अब कोई पूछताही नहीं क्या करें ?

दूसरा। अजी पूछे कहां से—अपनो पौ बारह तो तब हो जब कुछ राग रंग हो, कुछ इधर उधर झांक झूंक हो, सो यहां कोई ठिकानाही नहीं॥

तीसरा। कुछ पूछो मत, हमारे बादशाह सलामत तो ऐसे मुल्लाजो हैं कि कभी कोई फ़र्माइश हो नहीं करते सिवाय अपना बीबी के कभी इधर उधर की हवाही नहीं खाते॥

चौथा। अजी निरा मज़दूरा है मज़दूरा, यह क्या बादशाह होने क़ाबिल है ? रात दिन पीसना पीसा करता है, जब देखो हज़रत काम में मशगूल हैं—ऐशआराम तो इसे ख्वाब में भी नसीब नहीं॥

पांचवां। शहर की तवायफ़ें तो बिल्कुल रांड हो गई उन सभों की हालत पर तो रहम आता है, भाई मुझे तो एक दिन के लिये भी कहीं तख्त मिल जाय तो रंग बांध दूं उन बिचारियों के दुख दरिद्दर दूर कर दूं और सारे शहर में रज गज मचा दूं॥

पहिला। अब वह दिन दूर गए, बैठे रोया करो, मुहर्रमी सूरत बनाये रहो, दर्बार में तो क़दम रखने का जी नहीं चाहता जिन लोगों से जूते उठवाते थे अब वे सब दर्बार में बड़े २ मन्सब पा कर बढ़ २ कर बोलते हैं॥

चौथा। (लम्बी सांस लेकर) भाई जान, कहैं क्या जब अपना ही सोना खोटा हो तो परखवइया का क्या क़ुसूर? अरे जब हज़रत सलामत ही काफ़िर हो गये तो फिर ये सब क्यों न उभड़ें॥

तीसरा। और लुत्फ़ तो यह है कि हम लोग लब भी नहीं हिला सकते, ज़रा बोले नहीं कि वह बे भाव की पड़ने

लगी कि सिर खुजला कर रह जाना पड़ता है ॥

(बी इलाहीजान का प्रवेश—सब उठ उठ कर लम्बी चौड़ी आदाब अर्ज़ करते हैं)

इलाहीजान । [सब को सलाम का जवाब दे कर] क्यों हज़रात ? क्या हम लोगों के नसीब के साथ आप लोगों का दिल भी फिर गया ?

पहिला । भला ऐसा कभी हो सकता है जानेमन ? हम लोगों की तो ज़िन्दगी तुम हो तुम से कभी दिल फिर सकता है ? मगर करें क्या मजबूरी है क्या मुंह लेकर आवें, न गिरह में दाम है और न कहीं किसी उस्ताद के यहां कुछ तार लगता है ॥

तीसरा । अजी इस मनहूस बादशाह ने तो शहर को बेरौनक़ कर डाला, और तुर्रा यह है कि आप तो आप, आप के मुसाहिबीन और वज़रा भी जामए पारसाई पहिरे हैं! अब हम लोग क्यों कर जीयेंगे ?

इलाहीजान । अब इस की फ़िक्र कहां तक करोगे अगर हम तुम सलामत रहेंगे तो बहुतेरे गांठ के पूरे आंख के अन्धे फँसेंहीगे मगर मुलाक़ात क्यों तर्क करते हो ? मैं कभी कुछ कहती हूं ?

चौथा । तुम्हारे इसी मन्न का नतीजा तो है कि इसी मनहूस के वक़्त में एक मौक़ा हाथ आया ॥

सब । [घबरा कर] कौन मौक़: ?

चौथा । [बड़ी शेख़ी के साथ] अजी हज़रत, आप लोग कुछ ख़बर भी रखते हैं, अलमस्त पड़े रहते हैं, बन्द: रात दिन इसी फ़िराक़ में पड़ा रहता है, आप को क्या ?

पहिला । फ़र्माइये तो सुर्ग़ामिला क्या है ?

दूसरा । वल्लाह, कहो तो सही क्या गुल खिलाया ?

तीसरा। लिल्लाह ! अब देर न करो जल्द ज़ुबां खोलो ॥

पांचवां। मीर साहेब, आप बड़े कारू हैं, आप की क्या बात है आप को सिर की क़सम जल्द उक़द: कुशाई कीजिये ॥

[चौथा सिर हिला हिला मोछों पर ताव देता हुआ इधर उधर देखता है पर बोलता नहीं]

दूलाहीजान। [मीरसाहेब का हाथ पकड़ कर] वल्लाह ! जब से तुमने यह खुशखबरी दी कलेजा उमड़ा पड़ता है, खुदा के लिये जल्द फ़र्माइये क्या मौक़: हाथ आया ?

मीर। खुदा की क़सम इन सभों को तो मैं हर्गिज़ न बतलाता मगर तुम्हारी बात नहीं टाल सकता। उदयपुर के राना ने राजा मानसिंह से कुछ बेहूदगी की है इस लिए शाहीफ़ौज की उस पर चढ़ाई होनेवाली है, बस अब यार लोगों की भी बन पड़ेगी, फ़ौज के हमराह हमलोग भी चलेंगे मौक़: पाकर अपना काम बनाएंगे, लूट का माल तो ऐनुल्मा-लही ठहरा और फिर इधर उधर मौक़े से कोई घात लग गया तो उस में भी कोई मुज़ायक़ा नहीं। वहां से लौट कर आवेंगे तब फिर आपकी हाज़िरी देंगे और सारे दिनों की कसर निकालेंगे ॥

[सबके सब मारे हर्ष के उछल पड़ते हैं और "खूब" "खूब" कह कह कर एक दूसरे से हाथ मिलाते और क़हक़हा मारते हैं]

दूलाहीजान। [मन में प्रसन्न होकर परन्तु प्रकाश में कातर स्वर से] नहीं नहीं लड़ाई में बड़े खतरे रहते हैं, मैं तुम लोगों का न जाने दूंगी ॥

मीर। तुमने क्या हम लोगों को बेवकूफ़ समझा है ? अरे हम लोग लड़ाई के वक़्त टल रहते हैं और जब लूट का वक़्त आता है तब सब से आगे कूदते हैं ॥

इलाहीजान। और अगर शाही फ़ौज ने शिकस्त खाई ?

मीर। तो हमारा नुक़सान क्या ? उस्तुरा पास रक्खेंगे फ़ौरन डाढ़ी मूंड़ जुन्नार पहिर हिन्दू बन जांयगे ॥

इलाहीजान। अच्छा तो आओ हम लोग ख़ुदावन्द तआला से कामयाबी के लिए दुआ मांगें ॥

(सब मिलकर गाते हैं)

मुरादें बर आएं हमारी ख़ुदाया।
हमेशः हो मतलब बरारी ख़ुदाया ॥
जहां में जहां तक गुज़र हो हमारा।
बिछाए रहैं जाल भारी ख़ुदाया ॥
बनाएं निशाना जिसे वह न छूटे।
न हो वार खाली हमारी ख़ुदाया ॥
कोई मत का हीना औ पूरा गिरह का।
रहै करता ख़िदमत गुज़ारी ख़ुदाया ॥
ये बुड्ढे ख़बीसों से दुनियां हो ख़ाली।
हों नौउम्र ही अख़्तियारी ख़ुदाया ॥
गली कूचे घर घर में ऐशो तरब हो।
हमेशः रहै दौर जारी ख़ुदाया ॥
हों घर में मुयस्सर न रोटी व कपड़े।
मगर हो न कम मै ख़ुमारी ख़ुदाया ॥

(पटाक्षेप)

पञ्चम अङ्क

प्रथम गर्भाङ्क

[स्थान उदयपुर—देवीजी का मन्दिर]

(मालती पूजा कर रही है)

(नेपथ्य में गान)

जय जग जननि हरनि भवभय दुख भक्ति मुक्ति सुख कारिनि ।
असुर निकन्दिनि सुर नर बन्दिनि जय जय विश्व विहारिनि ॥
जब जब भीर परत भक्तन पैं तब तब निज वपु धारी ।
असुर संहारत भक्त उबारत आरत हृदय विचारी ॥
तुव पद बल हम गिनत न काहू चरित उदार तुमारे ।
अब जिनि विलम करहु जग जननी मेटहु दुःख हमारे ॥१॥

मालती—मां ।

"मोर मनोरथ जानहु नीके । बसहु सदा उर पुर सबही के"॥
मैंने कठिन व्रत धारन किया है, मां ! ऐसी सुमति देना जिस में मन न डिगने पावे। एक ओर प्रेम और दूसरी ओर धर्म है; जननी ! इस का निबाह मेरी सामर्थ से बाहर है केवल तुम्हारी कृपा साध्य है। इस तुच्छ हृदय को उसके सहने का बल प्रदान करो--गुलाबसिंह का उद्योग सफल हो। जगतजननि ! उनकी सफलता की साथ तुम्हारे सन्तानों की भी सफलता है अतएव इधर ध्यान दीजिये मां ! अशरण शरणि ! त्राहि ! [गद्गद कंठ से प्रणाम करती है सखियें आरती लिये आती हैं मालती आरती करती है सभों का एक साथ गाना]

राग रामकली ।

"जय जय जगजननि देबि, सुर नर मुनि असुर सेबि, भक्ति मुक्ति दायिनि, भय हरनि कालिका। मंगल मुदि सिद्धि सदनि

पर्व शर्वरीश वदनि, ताप तिमिर तरुण तरणि, किरण मालिका ॥ वर्म्म चर्म्म कर कृपाण, शूल सैल धनुष वाण, धरणि दलनि दानव दल, रणकरालिका। पूतना पिशाच प्रेत, डाकिनि शाकिनि समेत भूत ग्रह बेताल खग, मृगालि जालिका ॥ जय महेश भामिनो, अनेक रूप नामिनो समस्त लोक स्वामिनि, हिम शैल बालिका॥,,भारत आरत अनाथ, दोजे सिर अभय हाथ, जय जय जगदम्बपाहि, प्रणत पालिका ॥ १ ॥

[मन्दिर में प्रकाश होजाता है और देवीजो के कंठ से माला खसक कर गिरती है]

सखियें। ले सखो ! तुझे वधाई है, मां ने प्रसन्न हो कर तुझे प्रसाद दिया है ।

[मालती माला उठा सिर चढ़ाती है धीरे धीरे परदा गिरता है]

द्वितीय गर्भाङ्क ।

(स्थान उदयपुर, राणा का दर्बार)

(राणा और सर्दारगण यथा यथा स्थान पर बैठे हैं, गुलाबसिंह राणा के सामने खड़ा है)

गुलाबसिंह । हुकुम अन्नदाता ! बीकानेर कुंअर पृथ्वीराज श्री दर्बार के वड़े शुभचिंतक हैं उन्हों ने यह पत्र दिया है [पत्र देता है]।

राणा । (पत्र मंत्री को दे कर) मंत्री ! इसे पढ़ो ॥

[मंत्री पढ़ता है]

स्वस्ति श्री हिन्दू कुल गौरव मान बढ़ावन ।
वीरनाद हुङ्कारि शत्रु दल हृदय कंपावन ॥
रविकुलरवि शिशोदिया ध्वज जग में फहरावन ।
श्री प्रताप राणा प्रताप जग में फैलावन ॥
पृथीराज तुव दास अनेकन करत प्रणामा ।
इतै कुशल उत ईश सँवारैं सब तुव कामा ॥

सुनिये इत की कथा—मान उत तें जब आए।
बरनत निज अपमान रोष बेहद्द बढ़ाए॥
ताही समय और फरियादिहु आनि पुकारे।
लूट्यो शाही भेट कह्यो—कह शाह बिचारे॥
बादशाह भये आग बबूला यह सब सुनतहिं।
मान, मुहब्बतख़ानहि आज्ञा दीनी तुरतहिं॥
एक लाख लै सैन तुरत राना पैं धाओ।
उदयपूर करि चूर सकल गढ़ धूर मिलाओ॥
थापि आपनो थाप दाप परताप मिटाओ।
करि बंदी तेहि तुरत आज दर्बार पठाओ॥
सुनि आज्ञा—फ़रमान किये सेना पर जारी।
मान, मुहब्बतख़ान कूच की करत तयारी॥
पहुंचे समुझौ तिन्हें सदा रखियो हुसियारी।
परम प्रबल अरि दलन, दलन की करो तयारी॥
हम सब नें तो राजपूत को नाम डुबायो।
अबलौं तुमहीं एक मान मरजाद बचायो॥
पितर खरे आकाश मार्ग तुम्हरो मुख जोवत।
इक तुम्हरोही आस वीर छत्री सब सोवत॥
जब लौं तन मैं रहै प्राण तब लौं जिनि डगियो।
हे प्रताप भारत प्रताप सुधि जिय मैं पगियो॥
ह्यां के सब संवाद भेजिहौं तुम्हें बराबर।
ह्वां निज जय की ख़बर हमैं दीजौ किरपा कर॥
तुव प्रताप राणा प्रताप सब पूरि रहै छिति।
विजय लच्छमी तुम्हैं मिलैं नित किम् अधिकम् इति॥ १॥

राणा। (आवेश के साथ) आवैं, आवैं, हम सदा उनके लिये तयार हैं वे आवैं तो सही, [सर्दारों के प्रति] हमारे वीर सर्दार!

"सावधान सब लोग रहहु सब भांति सदाहीं।

जागत ही सब रहैं रैन हूं सोवें नाहीं ॥
कसे रहैं कटि रात दिवस सब वीर हमारे।
अस्त्र पीठ सों होंहि चारजामें जिनि न्यारे ॥
तोड़ा सुलगत रहैं चढ़े घोड़ा बंदूकन।
रहैं खुलो ही म्यान प्रतंचे नहीं उतरें छन ॥
देखि लेहिंगे कैसे पामर जवन बहादुर।
आवहिं तो सनमुख चढ़ि कायर क्रूर सबै जुर ॥
दैहैं रन को स्वाद तुरन्तहिं तिनहिं चखाई।
जोपै इक छन हू सनमुख ह्वै करहिं लराई ॥ १ ॥ ,,

[धीरे धीरे परदा गिरता है]

——

तृतीय गर्भाङ्क।

(स्थान अजमेर – शाही फ़ौज का खेमा)

(शाहज़ादा सलीम* मानसिंह और मुहब्बत खां)

तथा और सेनापतिगण)

मानसिंह। [शाहज़ादा से] हम लोग दौड़ा दौड़ तो यहां तक पहुंचे अब हुजूर का क्या क़स्द है ?

सलीम। मेरी राय है कि अब यहां दो चार दिन आराम कर के तब आगे बढ़ा जाय ॥

मुहब्बतखां। खुदावन्द ! तावेदार की राय नाक़िस में अब एक लहज: भी तवक़ुफ़ करना मुनासिब नहीं क्योंकि अगर दुश्मनों को ज़रा भी ख़बर हो जायगी तो फिर फ़तहयाबी मुशकिल होगी; एकाएक जा गिरना चाहिये ॥

मानसिंह। ख़बर की आप क्या कहते हैं ? प्रतापसिंह कोई

* टाड साहब ने अपने राजस्थान में उदयपुर की लड़ाई में शाहजाद: सलीम का जाना लिखा है, परंतु अब यह निश्चय हो गया है कि शाहजाद: उस समय बहुत ही छोटा था और इस लड़ाई में नहीं भेजा गया था-

मामूली आदमी नहीं है उसने जब सोते सिंह को छेड़ा है तब पहिलेही से बचने का भी उपाय किया हो होगा। जिस वक़ उसके यहां से हम विदा हुए उसी समय उसका दूत भी दिल्ली ख़बर लेने छूटा होगा, अब जितनी ही देर होगी उतनाही वह तयार हो सकैगा॥

सलीम। ख़बरही होकर क्या होगी? क्या उसकी फ़ौज हम से ज़ियादः है?

मानसिंह। शाहज़ादे सलामत! आप को कभी इनसे काम पड़ा होता तो हर्गिज़ ऐसा न फ़र्माते उसकी फ़ौज हम लोगों की चौथाई भी न होगी मगर एक राजपूत दस आदमियों के लिये काफ़ी है—तिस पर मेवाड़ के राजपूत तो ग़ज़ब के बहादुर होते हैं ज़रा चितौर के जंग का हाल ख़ां साहब से पूछें तब कैफ़ियत मालूम होगी॥

मुहब्बतख़ां। इस में कोई शुबह: नहीं—अगर वे लोग पहिले से ख़बरदार हो जायंगे हर्गिज़ फ़तह नसीब न होगी, चितौर पर बड़ीही मुशकिलों से फ़तह नसीब हुई थी—वह भी घर की फूट से॥

सलीम। तो बिस्मिल्लाह कीजिये—सलीम आराम तलब नहीं है। आप लोग मेरी तरफ़ से इतमीनान रक्खैं, मैं तो महज़ आप लोगों के आराम के ख़ियाल से कहता था—मगर महाराज मानसिंह! अगरचि राजपूत बड़े बहादुर हैं—मगर मुग़ल भी कोई ऐसे वैसे नहीं हैं। राजपूतों को घर बैठे लड़ना था मगर मुग़लों ने तो हज़ारों कोस से आकर हिन्द को फ़तह किया था, सलीम ने भी कमज़ोर हाथ से तलवार नहीं पकड़ी है और फिर हमारे साथ तो राजपूत कुल तिलक महाराज मानसिंह हैं॥

मानसिंह। यह कौन कहता है कि मुग़ल बहादुर नहीं हैं।

मगर खुदावन्द — अगर घर में नफ़ाक़ न होता तो ज़रा हिन्द को फ़तह करना मुशकिल था, खैर—मेरी ग़रज़ सिर्फ़ यह है कि देर करने में बजुज़ नुक़सान के कोई फ़ायदा नहीं ॥

सलीम। बेशक — तो आजही कूच करना चाहिये ॥

मानसिंह। (सेनापतियों के प्रति) बादशाह सलामत ने आप ही लोगों के भरोसे इस जङ्ग को छेड़ा है और अपने लख़्ते जिगर शाहज़ादः सलीम को साथ दिया है। आप लोग ऐसी मुस्तैदी और बहादुरी के साथ उदयपुर पर धावा करें कि चलते ही दुश्मनों को हटा दें ॥

एक सेनापति। हुज़ूर! इस की कैफ़ियत मैदान जङ्ग में मालूम होगी, हम लोग तो जां निसार हैं। मगर मेरी अक़्ल नाक़िस में इधर से कोई शख़्स ऐसा जाना चाहिये कि जो वहां की भीतरी ख़बर भी ले और अगर मुमकिन हो तो उन में से कुछ चीदः सरदारों को अपनी तरफ़ मिलावे ॥

मुहब्बतखां। ख़ूब--ख़ूब—तुमने यह ख़ूब सोचा मगर इस वक़्त इस काम के लिये तुम से बढ़कर और कौन है ?

सेनापति। [मन में] "जो बोले सो घी को जाय" (प्रकाश) हालांकि फ़िद्वी किसी क़ाबिल नहीं, मगर तामील इर्शाद फ़र्ज़ समझ कर रज़ा चाहता है ॥

सलीम। शाबाश, आप ही सा जवांमर्द मुस्तैद शख़्स तो ऐसा काम अञ्जाम दे सकता है, अच्छा अब आप अल्लाहो अकबर का नाम लेकर कूच कीजिये ॥

[सेनापति को पान देता है और वह सलाम करके जाता है]

मानसिंह। (सेनापतियों के प्रति)

चलो चलो सब बीर बहादुर कमर कसो अब।

दिल्लीपति सेवा को अवसर फिर पैहो कब ॥
निज प्रताप बल तुच्छ प्रताप प्रताप मिटाओ ।
थापि अपनो थाप ताप निज अरिहिं तपाओ ॥
चढ़ि शिखर उदयपुर महल के शाही ध्वज फहरावहीं ।
जय नाद जु अकबर शाह की चारों ओर मचावहीं ॥ १ ॥
सब । आमीं—आमीं—आमीं ॥

[पटाक्षेप]

चतुर्थ गर्भाङ्क

(स्थान उदयपुर—अन्तःपुर)

[महाराणा और महाराणी]

प्रतापसिंह । मानसिंह ने जो कुछ किया वह तुमने सुना ही ॥
महाराणी । महाराज ! मानसिंह का कौन दोष है ? आप ने जो सलूक उन के साथ किया उसके बदले वह और करते ही क्या ?
प्रताप । प्रिये ! तुम प्रतापसिंह की स्त्री होकर ऐसी बात कहती हो ? मानसिंह को अपनी करतूत पर लज्जित होकर घर बैठना था, या एक अनुचित काम करके उसे ढाकने के लिये दूसरा घोरतर अनुचित काम करना ? जब मान ही नहीं तो फिर मानसिंह क्या ? चाहे हम लोगों का हिन्दू धर्म भला हो या बुरा परन्तु जब तक हम हिन्दूधर्म अवलम्बन किये हैं उसके नियमों का पालन करना हमारा कर्तव्य है जहां हमारे धर्मानुसार हिन्दुओं ही में एक जाति दूसरी जाति का बनाया अन्न नहीं खाते, वहां विधर्मी मुसल्मानों को बेटी देना क्या कम लज्जा और घृणा की बात है ? और फिर यदि उसने किसी कारण से ऐसा काम कर भी डाला

या तो चुपचाप लज्जित हो कर उसके लिये पश्चात्ताप करना उचित था, या यह कि और भी बचे बचाए लोगों का धर्मनाश करना? दो चार लड़ाइयों को जीत कर उसका मन बहुत ही बढ़ रहा था इस लिये मैं ऐसा न करता तो और क्या करता? यदि वह यहां से भी अपने घृणास्पद काम के लिये कुछ शिक्षा न पाता तो संसार में और कहां पाता? यह अधर्म भी तब धर्म को समझा जाता, क्योंकि इस गद्दी की बड़ाई केवल हिन्दू गौरवरक्षा के कारण है यदि हम ऐसा न करते तो इस कुल को कलंकित करते, दूसरे यह कि उसे इस बात बड़ा अभिमान होता कि राणा मेरे भय से दब गया और मेरे अधर्म पर ढाकन डाल दिया, इसलिये प्यारी! मरना अच्छा—राज्यासन छोड़कर बन बन घूमना अच्छा परन्तु अपयश और अधर्म का भागी होना नहीं अच्छा ॥

तरु छाया आसन सिला भीलन संग निवास ।
परम सुखद, पै धर्म तजि रुचत न राज विलास ॥

रानी। नाथ! हमारा अपराध क्षमा कीजिये, हम स्त्रीजाति कहां तक समझ सकती हैं हमारे लिये तो भाग्य की बात है कि आप की सेवा का अधिक अवसर मिलेगा ॥

जल भरि सब थल स्वच्छ करि नाना पाक बनाय ।
बड़ भागिनि बीजन करूं अमित पलोटौं पाय ॥

प्रतापसिंह शाबाश! यह बात तुम्हीं को शोभा देती है। भला मानसिंह भला तुम ने जो किया अच्छा किया इस का प्रतिफल तुम्हें दिये बिना मैं विश्राम नहीं लेने का

जबलौं नहीं गढ़ ढाहि करि दासिन कौड़िन बेच
करौं न दक्षिण कर असन सेज न पगिया पेच *

* यह किम्वदन्ती प्रसिद्ध है कि महाराणा प्रतापसिंह ने यह प्रतिज्ञा की थी कि जब

(नेपथ्य में)

आलस निसि भई भोर उदय होत रविकुल तरनि।
भागहु कायर चोर अब बिलंब नहिं नास में॥

तक जयपुर का गढ़ अपने हाथ से ढहा कर दासियों को कौड़ी के मोल न बेच लूंगा न शय्या पर शयन करूंगा न सिर पर पाग रक्खूंगा और न दाहिने हाथ से भोजन करूंगा इस प्रतिज्ञा का पालन उस वंश वाले बराबर करते आते थे। जयपुर के महाराज रामसिंह ने सोचा कि क्षत्रियों की प्रतिज्ञा महा भयानक होती है, एक न एक दिन परिणाम बुरा होगा। इस लिये सन् १८७७ ईस्वी में जब श्री मती भारतेश्वरी के प्रिय युवराज प्रिन्स आव वेल्स भारत में आये थे उस समय महाराणा सज्जनसिंह और महाराज रामसिंह, उनसे भेट करने बम्बई गये थे तब महाराज रामसिंह आग्रह पूर्वक महाराणा साहिब को जयपुर लेगये। ज्यों ही क़िले के दरवाजे पर पहुंचे तोप में गोला भरा तयार था। महाराज रामसिंह ने महाराणा साहिब सेबहुत आग्रह करके उसे उनके हाथ से दग़वा कर दो चार कनगूरे गढ़ के ढहवा दिये और दो चार गोलियों (दासियों) को अपने ही मुसाहिबों के हाथ कौड़ियों मोल बिकवा दिया। इस भांत उनको प्रतिज्ञा पूरो कराके उन्हें शय्या पर सुलाया और पगड़ी पहराया। यह किम्बदन्ति कहां तक ठीक है इसको निर्णय करने के लिये मैंने अपने मित्र कुंवर जोधसिंह (उदय पुर राज्य के सुयोग्य दीवान राय पन्नालाल बहादुर सी॰ आई॰ ई॰ के भातृपुत्र) को लिखा था उन्हों ने जो उत्तर दिया है अविकल प्रकाशित होता है। पाठक गण इस से इस की अलीकता समझ सकेंगे॥

"प्रताप नाटक आप ने पद्मावती से भो अच्छा लिखा है। आप ने जो प्रतापसिंह को जयपुर के लिये प्रतिज्ञा पूछी यह इधर प्रसिद्ध नहीं है और न मैंने भी किसी इतिहास में पढ़ो, श्री महामहोपाध्याय कविराज श्यामलदास जी निर्मित "वीरविनोद" बृहत इतिहास के महाराणा प्रतापसिंह जी के प्रकर्ण में इन प्रतिज्ञाओं का ज़िक्र नहीं है यह बात भी निरी निरमूल है कि रामसिंह जी ने महाराणा सज्जनसिंह जी से कोई प्रतिज्ञा पूरो करवाई थो न जाने ऐसी निर्मूल गपें क्यों लोक में प्रसिद्ध हो जाती हैं। आपने टाड राजस्थान या मेरे ही छोटे इतिहास में पढ़ा होगा कि महाराणा अमरसिंह जी द्वितीय ने ही जयपुर के महाराज सवाई जयसिंह जी को निज कन्या व्याह दी थी और जयपुर से एक घर का सा व्यवहार हो गया था उसके उपरान्त जयसिंह के पश्चात सवाई माधोसिंह जी उनके पुत्र और मेवाड़ के भानजे थे गद्दो पर बैठे॥

हां जयपुर से सम्बन्ध रखने वाली श्री प्रतापसिंह जो के समय में कुंवर मानसिंह और भगवानदास का अलहदा २ तौर से श्री जो के पास आना व हलदी घाटी की लड़ाई

प्रतापसिंह। प्रिये, अब विदा करो देखो कविराजा जी युद्ध आरम्भ करने की सूचना दे रहे हैं॥

रानी। (सहास्य) नाथ, आप सुख से पधारें परन्तु दासी को भूल न जाइयेगा॥

(राजकुमार एक छोटी सी तलवार लिये दौड़ते हुए आते हैं)

राजकुमार। (तलवार खोलकर) मा! हम बादशाह के बेते का

प्रसिद्ध घटना हुई थी। इसके सिवाय और भी कई घटनाएं जो प्रतापसिंह जी के समय की प्रसिद्ध हैं और इतिहास में भी कई सन्निवेशित की गई हैं वे कहां तक लिखी जांय पर उनमें भी जयपुर से सम्बन्ध रखने वाली तो दो ही हैं॥

आप अपने नाटक को सुखान्त करोगे या दुखान्त क्योंकि उनके पिछले आठ वर्षों में अकबर ने चढ़ाई फिर मेवाड़ पर न की थी और उनके पुत्र अमरसिंह जी के समय में अकबर के बाद तो जहांगीर ने ही अमरसिंह जी पर आप अजमेर में रह कर सेना भेजी थी। यदि दुखान्त करोगे तो प्रतापसिंह जी के परलोकवास की घटना के सिवाय कोई दुखदायक वार्ता नहीं हुई उनके परलोक करते समय का पश्चाताप तथा उपदेश बड़े वीरता के शब्दों से भरे थे॥

आज मेरे पत्र में जिन वीर पुरुषों का विशेष हाल है उन्हीं के लिये यहां जो दोहे प्रसिद्ध हैं उन्हें लिखता हूं और अन्त में एक श्लोक भी लिखता हूं जो एक प्रतापसिंह जी के खोदित लिपी में मिला है जिस में हल्दी घाटी की लड़ाई का वृत्तान्त है। यदि उचित समझें तो इन दोहों को नाटक के टाइटल पर छपवा देवें॥

सोरठा

अकबर समद अथाह। सूरापण भरियो सजल।
मेवाड़ो तिण माह। पोयण फूल प्रताप सो॥
अकबर घोर अन्धार। ऊंघाणे हिन्दू अवर।
जागे जग दातार। पोहरे राण प्रताप सो॥
अकबर एकण वार। दागल की सारी दुनी।
विन दागल असवार। एकल राण प्रताप सी॥

श्लोक

कृत्वा करे खड्ग लतां सुवल्लभां। प्रतापसिंहे समुपागते मृधे॥
साखण्डिता मानवती हियसमू। सङ्कोचयन्ती चरणौ पराङ्मुखी।

छिल दुछी तलवाल छे कात काल खेलने का गेंद बनावेंगे हमें भी दलबाल के छाथ जाने का हुकुम देव ॥

रानी । वत्स ! तुम अवश्य जाओ—पर लूट में जो गहना लाना वह हमीं को देना ॥

राजकुमार । हां हां, छब तुमको देंगे पल छिलपेच औल कलंगी तो हम ही पहिलेंगे ॥

(सब लोग हंसते हैं)

(नेपथ्य में महाराज प्रतापसिंह की जय का कोलाहल होता है)

प्रतापसिंह । (खड़े होकर) सेना लड़ने के लिये बड़ी उत्सुक हो रही है प्रिये ! अब जाता हूं— देखें इस जन्म में फिर तुम्हारा चन्द्रानन देखने में आता है कि नहीं ॥

रानी । नाथ ! हमारा आपका साथ क्या कभी छूट सक्ता है ? भगवान श्री एकलिंग जी बहुतही शीघ्र विजय लक्ष्मीदेंगे ॥

प्रतापसिंह । तथास्तु ॥

(प्रतापसिंह नंगी तलवार लिये आगे आगे, राजकुमार छोटी नंगी तलवार लिये पीछे पीछे मुड़ मुड़कर प्रेमपूर्वक रानी की ओर देखते हुए जाते हैं—रानी अतृप्त नेत्रों से देखती है)

पटाक्षेप

— —

पञ्चम गर्भाङ्क ।

(उदयपुर—मैदान)

(महाराणा की सेना घोड़े पर महाराणा, सर्दारगण तथा

ऐतिहासिक ग़लती

यह बात निश्चित रूप से सिद्ध हुई है कि हलदी घाटी की लड़ाई में अकबर स्वयं मौजूद न था और न उसका कोई शाहज़ादा । पर मानसिंह था और उसके सङ्ग शाही सैनिक अफसर भी थे" ॥

कविराजा)

कविराजा—

उमड़ीं क्यों सुरवाला सब नभ मंडल मोहैं ।
ह्वै व्याकुल क्यों लरत करन जयमाला मोहैं ॥
कटकटाइ क्यों अरी जोगिनी धावत उत इत ।
गिद्धराज मँड़रात व्यर्थ ही कलह करत कित ॥
धरि धीर बैठि देखत न किन सबकी आसा पूरि है ।
जब वीर प्रताप कृपाण लै शत्रुन के तन चूरि है ॥ १ ॥
कहा कहत ? सम प्यास राम रावण रण माहीं ।
कौरव पाण्डव लरे बुझी तब हू वह नाहीं ॥
ताहि बुझावन हार कौन जग में है जायो ।
हाय ! न कोउ अब लौं मेरो हृदय जुड़ायो ॥
चुप लखत न क्यों रे बावरे छिन ही में घबराइ है ।
जब बाण गंग इत उमड़िहै तो पैं पियो न जाइ है ॥ २ ॥
अहो वीर क्यों करत विलम्ब अवसर क्यों खोवत ।
क्यों न शत्रु सिर गिरत बाट अब काको जोवत ।
देखो नभ मैं पुरुषे तुव गति की गति जोहत ।
हिय उछाह आनन्दित मुख आतुरता सोहत ॥
करि सिंहनाद हरि शत्रु हिय अपुने पांव बढ़ाइयै ।
जय जयति मिवार प्रताप जय कहि अरि हृदय कँपाइयै ॥३॥

(महाराणा प्रतापसिंह की जय मेवार की जय आदि कोलाहल करते उत्साह के साथ सेना का नेपथ्य में गमन)

(दूसरी ओर से गुलाबसिंह का प्रवेश)

गुलाब । प्रेम ! तेरा इतना बड़ा साहस कि तू पाषाणवत् कठोर वीर हृदय पर भी अपना अधिकार जमा लेता है ? अरे जिस गुलाबसिंह ने कभी स्वप्न में भी शत्रु से पीछा न दिया होगा आज तैंने उसे डोर में बांध कर अपना बन्दी बना

लिया ! किधर से आया, कब आया, और कैसे इस दृढ़ हृदय गढ़ में समाया कुछ जान भी न पड़ा कि भला मैं कुछ तो अपने जी की निकाल लेता । तुझे कुछ तो दिखला देता कि वीर हृदय पर चढ़ाई करने का फल क्या होता है ? पर हाय ! मैं अब क्या कर सकता हूं अब तो तेरे फन्दे में फंस गया । हिल तो सकता ही नहीं वीरता क्या दिखलाऊं ! हाय ! देश भक्त वीर क्षत्रिय लोग वह देखो रण भूमि में पहुंच गये और मैं अभी यहीं खड़ा हूं ! कुछ चिन्ता नहीं । भाइयो ! मैं भी पहुंचा । गुलाबसिंह पीछे रहने वाला नहीं है । तुमारा साथ देगा; अब मुझे प्राण विसर्जन करने में तनिक भी आगा पीछा नहीं है । मैं अपनी प्रेम पुत्तलिका से अन्तिम बिदाई ले आया । अब उसके कोमल मुख कमल का ध्यान करते करते मैं निःसंकोच अपनी मातृभूमि के लिये प्राण खो सकूंगा । (कुछ ठहर कर इधर उधर टहलते हुए) प्राण ! क्यों घबराते हो ? क्यों शत्रु हीन पृथ्वी करने के लिये व्याकुल हो रहे हो ? पृथ्वी में कौन है जो तुम्हारी चोट को संभाल सकेगा । जब तुम अकेले थे तब तो कोई तुम्हारा सामना कर ही नहीं सकता था और अब ? अब तुमारे साथ प्रेम के रहते कौन है जो तुम्हें जीत सके । अब तो "कार्यं वा साधयामि शरीरं वा पातयामि" प्यारी मालती ! देखो अपनी प्रतिज्ञा स्मरण रखना देखो अभी तुम्हारा गुलाबसिंह तुम्हारी आज्ञा पालन करके आता है । अभी अपनी असीम साहसाग्नि में शत्रु दल भस्म कर तुम्हारा हृदय राज्य अधिकार करेगा अथवा तुमारे प्रेम मय मुख का ध्यान करता करता अनंत सुख धाम की ओर प्रस्थान करेगा । पर याद रखना तुम्हारा चातक कभी दूसरे जल से तृप्त न होगा; तुम भी कृपा कर

उसकी सुध न भुला देना॥

(नेपथ्य में कोलाहल)

(चौंक कर) जान पड़ता है लड़ाई आरम्भ हो गई। तो मैं भी पहुंचा—(उन्मत्त की भांति वीरदर्प के साथ जाता है)

षष्टम गर्भाङ्क

(स्थान एक पहाड़ी बरसाती नदी का किनारा)

(नदी के एक किनारे पर चेतक घोड़े पर सवार प्रतापसिंह और पीछे पीछे घोड़े पर सवार सक्ता जी दूसरी ओर दो मुग़ल सर्दार मुमुर्ष अवस्था में भूमि पर पड़े छटपटा रहे हैं)

सक्ता जी। (राना को ललकार कर) ओ नीले घोड़े के सवार!

राना। (पीछे फिरकर सक्ता जी को देख घोड़े को रोक कर मन ही मन) आह! यह क्या सक्ता इस समय अपना वैर चुकाने आया है? अच्छा कुछ चिन्ता नहीं, उन नीच यवनों के हाथ से मरने की अपेक्षा पवित्र सिसौदिया कुल के वीर हाथ से वीरगति पाना सहस्र गुण श्रेय है (प्रकाश ललकार कर) रे क्षत्रिय कुल कलंक, आ हम तेरी प्रतिहिंसा वृत्ति चरितार्थ करने के लिये प्रस्तुत हैं॥

सक्ता जी। (घोड़े से कूद कर राना का पैर पकड़ कर) भैया प्रताप, वाक्य बाणों से हमारा हृदय मत बेधो। बहुत हुई; हम प्रतिहिंसा लेने नहीं आये हैं हम अपराध मार्जना कराने आये हैं; भाई प्रताप, एक बेर हृदय से कहो—सक्ता, हमने तेरा घोर अपराध क्षमा किया॥

राना। (सक्ता का हाथ थाम कर साश्रुनयन) भाई सक्ता, प्यारे भाई हमने तुम्हारे अपराधों को क्षमा किया क्या तुम भी हमारे अनुचित बर्तावों को अपने हृदय से भुला दोगे?

सक्ता। (रोते रोते) भैया, भैया, अब कुछ न कहो अब नहीं सही जाती, हाय जिसने तुम्हारे जैसे वीर, देशहितैषी

उदार और प्रेम पूरित हृदय भाई के साथ शत्रुता की, क्या उससे बढ़कर नीच कोई संसार में हो सकता है? उसके साथ जो बर्ताव किये जायं थोड़े हैं॥

राना। (आंखों को पोछकर—बात फेर कर) हां यह तो बतलाओ तुम यहां इस कुसमय में कैसे आ गये?

सक्ता। (आंख पोछते पोछते) जब हमने देखा कि रणक्षेत्र से तुम इस ओर बढ़े और इन दोनों नीच अन्यायी यवनों ने तुम्हारा पीछा किया, हमसे न रहा गया, न जाने कैसा भ्रातस्नेह हृदय में उमड़ा कि हमसे रुक न सका, हम भी पीछे हो लिए जब तुमारा प्यारा चेतक तुम्हें लेकर तीर की भांति नदी पार हो गया और वह दोनों नीच नदी हलने में हिचकिचाये हमने उन दोनों पर हमला किया और भैया प्रताप. तुम्हारे चरणों के प्रताप से दोनों को मार गिराया, देखो वह दोनों पड़े छटपटा रहे हैं॥

राना। धन्य भाई सक्ता धन्य, भाई मिलै तो तुम सा, आहा! सच कहा है "मिलै न जगत सहोदर भ्राता" आओ तुम्हें छाती से लगा हृदय शीतल करैं (राणा ज्योंही रिकाब से पैर निकालते हैं चेतक पृथ्वी पर गिरता और छटपटाता है)

राना। (व्याकुल होकर) अरे यह क्या? अरे मेरे बहादुर प्राण दाता चेतक, हाय क्या तू मुझे यहां अकेला ही छोड़कर भागना चाहता है?

(दोनों भाई दौड़कर चेतक का ज़ीन आदि काट देते हैं। राणा दौड़कर नदी से अपनी पगड़ी भिगा कर जल लाते और चेतक के मुख में चुलाते हैं। सक्ता जी अपने डुपट्टा से हवा करते हैं। चेतक हांफता और एकटक राणा की ओर देखता आंसू बहाता है)

राणा। (चेतक के मुख को गोद में लेकर मुख चूम कर स्नेह

के साथ हाथ फेरते हुए) प्यारे घोड़े, मेरा विपत्ति-सहचर चेतक, तू ऐसा क्यों कर रहा है ? अरे तू यहां मुझे किसके भरोसे छोड़े जाता है ? (आंखों से आंसू बहते हैं, चेतक ज़रा सा मुंह उठा कर धीमे शब्द से हिनहिनाता राणा की ओर देखता प्राण त्याग करता है आंख खुलीही रह जाती हैं)

(प्रतापसिंह अत्यंत करुण स्वर से)

विपति संघाती धीर, स्वामि भक्त सांचो सुहृद ।
चल्यो छोड़ बेपीर, रे चेतक परताप तजि ॥
सहे अनेकन घाय, चढ़ि सलीम गज सीस पै ।
पीछो दियो न पाय, अब क्यों भाजत मोहिं तजि ॥
रतन अमोलक तोल, सहस गुनौ जो वारिये ।
तौहू लहै न मोल, रे चेतक तुव सामुहे ॥
करिकै ऋनिया मोहि, हा हा चेतक चलि बस्यो ।
सहि नहिं सकत बिछोहि, अब जीवन लागत वृथा ॥

सक्ता जी। (सांत्वना देकर) भैया, तुम धीर वीर हो कर ऐसे अधीर होते हो ? चेतक ने अपना काम किया, प्राण दिया पर अपने कर्तव्य से विमुख न हुआ; और क्या प्रतापसिंह आज मोह के वशीभूत होकर निज कर्तव्य को भूल रहे हैं ? सारी हिन्दू जाति इस समय एक तुम्हारा मुख देख रही है – उठो देर न करो। मेरे इस घोड़े पर चढ़ कर किसी सुरक्षित स्थान पर जाकर अपने इन घावों की दवा करो, मेरे लिये कुछ चिन्ता न करना मैं उन दोनों मुग़लों के घोड़ों में से एक को लेकर अभी मुग़ल शिविर में जाकर उनकी खबर लेता हूं ॥

(प्रताप के उत्तर की प्रतीक्षा न करके सक्ता का तीर की भांति प्रस्थान और प्रतापसिंह का भौचक से होकर इधर उधर देखते रह जाना) (पटाक्षेप)

षष्टम अङ्क

प्रथम गर्भाङ्क

(दिल्ली—शाही महल)

(अकबर और पृथ्वीराज)

अकबर । अब तक उदयपुर की कोई ख़बर न मिली; तबीयत निहायत परेशान है ।

पृथ्वीराज । हुज़ूर, राणा प्रतापसिंह को परास्त करना कोई हंसी खेल नहीं है; फ़ौज इसी तरद्दुद में होगी इसी से कोई ख़बर नहीं आई । पर मेरी समझ में ऐसे ख़तरे की जगह शाहज़ादा सलीम को भेजना कुछ अच्छा नहीं हुआ ॥

अकबर । राजा साहब, यह आप क्या फ़र्माते हैं? अकबर ऐसा बुज़दिल नहीं है जो बमुक़ाबिल जंग अपनी या अपने औ-लाद की जान को अज़ीज़ रक्खे— अगर मैदानेजङ्ग में बहादुरी के साथ मेरा फ़र्ज़न्द काम आवे तो मैं समझूंगा कि वह अपने हक़ को अदा कर गया और अपने तईं उसका वालिद होना फ़ख़्र मानूंगा । देखिये बचपन से मैं ने जिस क़दर तकलीफ़ें उठाईं और जैसे ख़तरों में अपने तईं डाला अगर उनसे ख़ौफ़ खाता तो हर्गिज़ आज यह दिन नसीब न होता ॥

(नेपथ्य में)

जय प्रताप तुव शाह विजय लच्छी चेरी सी ।
हाथ बांधि मनु करत रहत चहुं दिसि फेरी सी ॥
जे हतभागी परत आइ तुव कोप ज्वाल मैं ।
भस्म होत छिन माहिं पिसत सो काल गाल मैं ॥
मेवार छार जय हार लै फ़तेह मुबारक मुख कहत ॥
युवराज सलीम उमङ्ग सों तुव पद चूमन अब चहत ।१।

पृथ्वीराज। (मन में) देता तो है बादशाह को विजय की मुबारकबादी, परंतु पहिले ही मुख से "जय प्रताप" निकला। मा दुर्गे ; तेरी शरण -

(शाहज़ादा सलीम का प्रवेश)

सलीम। (बादशाह के पैरों पर गिरता है और बादशाह उठाकर छाती मे लगाता है) जहांपनाह को आज फ़तहेहिन्द मुबारक हो ॥

अकबर। (फिर सलीम को छाती मे लगाकर) जिसे तुम्हारा सा फ़र्ज़न्द खुदावन्द तआला ने दिया हो उसके लिये ऐसी ऐसी फ़तहयाबी क्या हक़ीक़त हैं ? मगर यह तो कहो आज फ़तहेहिन्द के क्या मानी ? क्या अब तक हिन्द फ़तेह होने को बाक़ी था ?

सलीम — खुदावन्द — बन्दगाने आली ने गोकि सारे हिन्द पर फ़तेहयाबी हासिल कर ली मगर जब तक इस छोटे से टुकड़े मेवार पर फतह न हासिल हो, तब तक हिन्दुओं की नज़र में हिन्द फ़तेह नहीं हुआ। राणा को लोग हिन्दू पति कहते हैं ॥

अकबर – तुम अभी फ़तेह की मुबारकबादी दे न रहे थे ?

सलीम — ज़रूर – बण्क़बाले आली हम लोग फ़तेहयाब तो ज़रूर हुए मगर यह फ़तेह नहीं के शुमार में है।

अकबर – क्यों – क्यों –

सलीम। खुदावन्द। मैं शुरू मे कैफ़ियत अर्ज़ करता हूं। हम लोगों ने जाते ही अजमेर से सिपहसालार जवांमर्द खां को खबर लेने और दुश्मनों के चन्द लोगों को क़ाबू में लाने की कोशिश के लिये भेजा, मगर खबर लाना और किसी को क़ाबू में लाना तो दर किनार; वह हज़रत खुद दुश्मनों के क़ाबू में आ गये और डाढ़ी मूंछ मूंड़ा कलंदर की सूरत

बना कर प्रताप को तर्फ़ से बतौर तुहफ़: हम लोगों के सामने पेश किये गये, एक तो तमाम फ़ौज मुस्तैद थी हो दूसरे उसकी इस हरकत से सबके सब ग़ज़ब में आ गये और हम लोगों ने बड़े ज़ोरशोर से चढ़ाई कर दी – फिर मैं क्या अर्ज़ करूं वाहरे बहादुराने राजपुताना! जिस वक़्त वे लोग भूखे शेर की तरह हमारी फ़ौज पर टूट पड़े कुछ अक़्ल काम न करती थी। वह मुट्ठी भर राजपूत हमारी बेशुमार फ़ौज को आन की आन में मूली की तरह काट कर रख देते थे। हमारे कैसे २ सर्दार इस जंग में काम आये हैं कि तावेदार कुछ गुज़ारिश नहीं कर सकता और उन लोगों के लिये तो मरना कोई बात ही न थी। ग्वालियर के राजा रामसिंह का इकलौता कुंवर खंडेराव बड़ी बहादुरी से लड़कर मारा गया मगर रामसिंह को उसकी कुछ भी परवा न थी, गोया बारूद में पलीता लगा दिया गया। फिर किस तरह पर जान छोड़ कर वह लड़ा है कि फ़िदी अर्ज़ नहीं कर सकता।

अकबर। शाबाश बहादुर रामसिंह शाबाश! हां फिर—

सलीम। मैं अपनी फ़ौज के घेरे में हाथी पर अम्मारी में सवार था – देखता क्या हूं कि खुद प्रताप, देव की सूरत, हाथ में भाला चमकाता घोड़ा फेंक कर हाथी पर पहुंचा और एकही हाथ में महावत को मार गिराया उस वक़्त बिजली की तरह कड़ककर उसने मुझसे जो कुछ कहा वह अब तक मेरे दिल में कड़क उठता है।

अकबर। (जोश में आकर खड़ा हो जाता है) क्या कहा?

सलीम। हुज़ूर। कहा कि 'अरे लड़के! तैं क्या ज़नानखाने में बैठकर लड़ाई की बहार देखने आया है? क्यों नहीं मैदान में निकलता? खैर! तुझे लड़का समझ कर छोड़

देता हूं मगर ले यह यहां का निशान लेता जा" इतना कह कर अम्मारी पर एक ऐसा भाला मारा कि अगला खम्भा पाश पाश हो गया॥

अकबर। (घबरा कर) फिर—फिर।

सलीम। इतने में तो नीचे से हमारे बहादुर सर्दारों ने गोलियों की झड़ी बांध दी। प्रताप को सात घाव लगे. बहादुर घोड़े को भी गोली लगी दोनों नीचे आये—फिर तो वह खौफ़-नाक जङ्ग हुआ कि जिसका बयान नहीं; इस जंग में प्रताप का तो काम तमाम होचुका था क्योंकि प्रताप अकेला ही मेरी फ़ौज में आ कूदा था और वह चौतरफ से घिर गया था मगर वाह रे निमक हलाल झाला राजा मानसिंह! यह तुम्हारा ही काम था। खुदावन्द, बिजली की तरह बादल के मानिन्द फौज को चीरता हुआ पहुंचा और राणा को हटा कर आप राणा की जगह खड़ा हो गया और राणा के धोखे आप मेरे सिपाहों के हाथ जां बहक़ हुआ मगर अपने मालिक को बचाया॥

पृथ्वीराज। (मन में) *धन्य झाला राजा धन्य, तुम्हारा जन्म सुफल हुआ*॥

अकबर। फिर प्रतापसिंह का क्या हुआ?

सलीम। हजूर! मेरे सिपाह तो यह समझकर कि प्रताप मारा गया खुशी के मारे मारने लगे और झाला राजा के सिपाह बिजली के मानिन्द राणा को लेकर निकल गये॥

अकबर। वाह रे बहादुराने राजपूताना वाह! क्यों न हो यह उन्हीं के हिस्से है—हां फिर क्या हुआ?

सलीम। हमारे दो बहादुर सरदारों ने प्रताप का पीछा किया और करीब था कि प्रताप को मारलेते क्योंकि प्रताप तो मजरूह था ही लेकिन उसके बहादुर और वफ़ादार घोड़े

चेतक ने बावजूदेकि निहायत ही ज़ख़मी था ऐसी वफ़ादारी की कि जो इन्सान से नामुमकिन है, और अपने मालिक को बचा लिया। दर्मियान में एक बरसाती नदी आ गई; हमारे सरदार जब तक उसके क़रीब पहुंचें चेतक राना को लेकर तीर के मानिन्द पार हो गया; मुग़ल सरदार नदी उतरने की कोशिश ही में थे कि राणा के भाई सक्ता जी ने जिसके साथ हुज़ूर ने इतने इहसान किये थे उन दोनों पर हमला किया और दोनों को मार गिराया॥

अकबर। (क्रोध पूर्वक) सक्ता से यह दग़ाबाज़ी? तुमने उसे क्या सज़ा दी?

सलीम। खुदावन्द, उसने मुझसे जां बख़्शी का क़ौल लेकर कुल सहीह हाल कह दिया इसलिये मैंने उसे मुआफ़ कर दिया मगर उसे और उसके कुल सक्तावंशी सरदारों को शाही मुलाज़िमत से अलहदः कर दिया॥

अकबर। खूब किया इस जङ्ग में कितने राजपूत खेत रहे?

सलीम। बाईस हज़ार फ़ौज लेकर राना ने चढ़ाई की थी जिन में से सिर्फ़ आठ हज़ार जीते फिरे॥

अकबर। शाबाश—हां फिर क्या हुआ?

सलीम। फिर हमलोग फ़तह का डङ्का बजाते शहर में दाख़िल हुए मगर वहां धरा क्या था--सारा शहर वीरान, जङ्गल होरहा है कहीं किसी का पता नहीं कुछ भी हाथ न आया और उसी जङ्गलिस्तान में हमारी फ़ौज पड़ी है। बक़ौल शख़्से कि "बकुला मारे पङ्ख हाथ"

अकबर। शहर की यह हालत क्यों हुई?

सलीम। सुना गया है कि बरसों पहिले से प्रताप ने सारी बस्तियां को उजाड़ कर दिया था ताकि दुश्मन अगर फ़तेहयाब भी हों तो कुछ न पायें; तमाम बाशिन्दगान को जंगल

और पहाड़ों में रहने का हुक्म था और खुद कभी कभी आकर तहक़ीक़ात करता था कि उसके हुक्म की तामील हुई या नहीं; एक चरवाहा एक सब्ज़ः में अपनी भेड़ चराता पाया गया—फ़ौरन उसे फांसी लटकवा दिया। इस सख़्ती के साथ उसने मेवाड़ ऐसे खुशनुमा मुल्क को जङ्गल बना दिया है॥

अकबर। आफ़रीन है इस दूरन्देशी पर; मगर तुम लोगों ने जङ्गलों में क्यों नहीं उसका पीछा किया?

सलीम। जहांपनाह! एक तो उस पहाड़ी जङ्गल में हम लोगों का नावाक़फ़ियत की हालत में घुसना नामुनासिब, दूसरे मौसिमे बरसात शुरू इस वक़्त तो नामुमकिन ही था॥

अकबर। कुछ मुज़ायक़ः नहीं बाद बरसात सही। मुझे मुल्क मेवाड़ के फ़तेह से सीमोज़र की ख्वाहिश नहीं; मुल्कगीरी की ख्वाहिश नहीं सिर्फ़ बातों की आन है। मगर देखना खबरदार जिसमें प्रताप ऐसा बहादुर शख़्स मारा न जाय ज़िन्दः गिरिफ़्तार हो। आहा! क्या ऐसा बहादुर भी रूये ज़मीन पर मौजूद है? अकबर! तू खुशनसीब है कि तुझे ऐसा दुश्मन मिला॥

पृथ्वीराज। (मन में) आहा!

साधु सराहैं साधुता जती जोखिता जान।
रहिमन सांचे सूर की बैरिहु करैं बखान॥

(पटाक्षेप)

द्वितीय गर्भाङ्क

[मेवाड़—जङ्गल—गिरि गुहा का बाहिरी प्रान्त]

(एक पत्थर की चट्टान को काट छांट कर सिंहासन बनाया हुआ उस पर राणा जी विराजमान ताड़ के पत्तों का छत्र लगा चंवर होता नक़ीब चोबदार आदि खड़े सरदारगण यथा यथा

स्थान भूमि पर बैठे, दाहिनी ओर सिंहासन के पास भीलों का सरदार काका काछे सिर पर लाल पाग मोर का पंख खोंसे हाथ में धनुष बान लिये)

कविराजा :—

दिन दिन बढ़ै प्रताप प्रताप प्रताप ईस के।
होइ नास जम पास बास सब यवन कीस के।
फिर मिवार सुखसार गरें जय माल विराजै।
देव रबिन यह अवनि यबनि बिनु सब दिन छाजै॥
हे देव दमन अशरन शरन अब न बिलस मन में धरहु।
करि क्षपा आर्य गौरव बहुरि थापि दुःख दारिद हरहु॥

प्रतापसिंह। मेरे प्यारे भाइयो! मेरे कारण तुम लोगों को बड़ा क्लेश उठाना पड़ा है आहा! कहां तुम लोग राजप्रासाद के रहने वाले राजसुख से सुखी और कहां कंटकमय मरू देश, पहाड़ों का घूमना, चट्टानों पर सोना, उसपर भी स्वछन्दता की नीन्द नहीं। एक स्थान पर जम कर रहना होता तो भी भला कुछ आराम के सामान हो जाते पर यहां तो इसका भी ठिकाना नहीं। आज यहां हैं तो यह निश्चय नहीं कि कल कहां कितने कोसों पर जङ्गल काट कर बैठने योग्य स्थान निकालना होगा—कल कैसा? यह भी तो स्थिर नहीं कि खाया यहां है तो हाथ कहां चलकर धोना होगा? आहा! जहां हज़ारों को भोजन देकर भोजन करते थे वहां अब अपने और अपने बच्चों के पेट भरने के लिये लालायत होना पड़ता है आहा! बहादुर भाइयो! जो तुमने भी आज यवन बादशाहों की गुलामी स्वीकार की होती तो इन शिला खंडों के बदले रत्न जटित सिंहासनों पर विराजमान होते, बड़े बड़े अभिमानी नरेस तुम्हारे चरणों पर अपने मुकुट झुलाते, संसार की यावत

सुख सामग्री तुम्हारे आगे हाथ जोड़े खड़ी रहती और जो कहीं बादशाही महलों में अपनी बहिनों को पहुंचाये होते तब तो फिर कहना ही क्या था, सालों से बढ़ कर किसका आदर होता है ? जहां दिल्ली पहुंचते कि फिर तुम्हीं तुम दिखाई देते। पर हाय ! मैं क्या करूं मेरी मोटी बुद्धि इन क्षणिक सुखों को सुख कह कर नहीं मानती। मैं गंवार आदमी, मुझे यह जंगल का बास उन शाही महलों से कहीं बढ़कर सुखद जान पड़ता है। आहा! हमारा हृदय मंदिर जो पवित्र आर्यगौरववासना से पूरित है इन बाहरी शोभाओं से मोहित नहीं होता मैं क्या करूं मेरा मन उन सुखद सामग्रियों को दुःखद करके मानता है परन्तु तुमलोग क्यों मेरे लिये कष्ट उठाते हो ? अपने जीवन को क्यों व्यर्थ गंवाते हो ? मुझे यहीं योंही भटकने दो तुम लोग अपने कामों को देखो न ? हम तुम लोगों को सुखी देख कर संतुष्ट होंगे॥

एक क्षत्रिय। (क्रोध पूर्वक तलवार को राणा के सामने फेंककर) महाराज ! यह लीजिये। जिस तलवार को हमने शत्रुओं के सिर जुदा करने के लिये बहुत दिनों से तेज़ कर रक्खी थी, आज उसी से हमलोगों का सिर अपने हाथ से जुदा कर दीजिये, जो तलवार शत्रुओं के रक्तपान की प्यासी देखिये मा दुर्गा की जीभ को भांति लपलपा रही है उस की प्यास को हम्हीं लोगों के रुधिर से बुझाइये। पर महाराज इन हृदयवेधी वाक्यवाणों का प्रयोग न कीजिये, जो स्वाधीनता का स्वर्गीय सुख हमलोग यहां भोग रहे हैं क्या कभी बड़े से बड़े पराश्रित राजसिंहासन पर बैठने से भी वह सुख प्राप्त हो सकता है ? छि ! मरना तो एक दिन हई है पर क्या उसके भय से आजही हम अपनेको बेच दें ? क्या दासत्व स्वीकार करने से हमारा मृत्यु भय

जाता रहेगा ? फिर महाराज ! जब मरना ही है तो मान खो कर मरने से क्या ?

" अहमद मोहि न सुहाय, अमिय पिलावत मान विनु ।
जो विष देइ बुलाय, मान सहित मरिवो भलो ॥ "

भीलराज । सुणो राणाजी ! हमलोगों के पुरखों ने जान दे कर इस राज का मान बचाया है हमलोगों के जीते जी कभी यह न होने पावेगा । दूसरे को कौन कहे आप भी चाहें तो हमारी स्वाधीनता को नहीं बेच सकते । आपका जी चाहे तो जाकर बादशाह से सुलह कर लीजिये पर हम भील लोग तो प्रान रहते कभी सिवाय हिन्दूपति के दूसरे किसी की गुलामी नहीं करने के ॥

प्रतापसिंह । धन्य आर्य वीर धन्य ! हम तुमलोगों से ऐसे ही उत्तर की आशा रखते थे, तुमलोगों के ऐसे वीरों के सहायक रहते हमें पूरा विश्वास है कि हमारी स्वाधीनता को कभी कोई छू भी न सकेगा ॥

मान रहै तौ प्रान, मान हीन जीवन वृथा
राखौ दृढ़ करि मान, जौ जीवन चाहौ सुखद

(रसोईदार का प्रवेश)

रसोइया – अन्नदाता, कांसा*तयार है ।

प्रताप – लाओ यहीं ले आओ—

(रसोइयां एक पत्थर के बड़े थाल में कुछ वन्य फल तथा बहुत से पत्ते के दोनों में उबाले हुए शाक और वृक्षों की जड़ रख कर लाया, स्वयं राणा तथा सब क्षत्रिय सर्दार एकही थाल में बैठते हैं)

(नेपथ्य में गान)

जो पै मिलै तीन दिन बीते ।

*कांसा – राजाओं के यहां भोजन के थाल को कांसा कहते हैं ।

कान्द मूल फल शाक उबाले अनायास सुख ही ते॥
बिना निहोरे, बिनु सेवकाई, सुख स्वतंत्रता साने।
तौ उनपै जग की सब सम्पति वारि सुधा सम माने॥
राज साज, पकवान रसीले, धन सम्पत्ति बड़ाई।
सब ही तुच्छ, तुच्छतम निश्चय निज मर्याद गंवाई॥
वन रजधानो, महल गिरि गुहा फूल आभरन सोहैं।
धर्म हेतु दुख सहत सुखी ते देव बधू लखि मोहैं॥

(ज्योंही, सब लोग ग्रास उठाते हैं त्योंही एक सैनिक घबराया हुआ आता है)

सैनिक। (हाथ जोड़कर) घणीखमा, अन्नदाता जी बड़ी भारी मुसलमान सेना इधर को उमड़ी चली आ रही है—

प्रताप। (भोजन छोड़ दर्प के साथ खड़े हो और तलवार खींचकर) कितनी दूर है॥

सैनिक। धर्मावतार! अभी आध कोस पर होगी॥

प्रताप। कुछ चिन्ता नहीं बहादुर सरदारो! आपलोग दुखी न हों; अभी तो पांच ही बेर परोसी थाल छोड़नी पड़ी है जो सौ बेर भी छोड़नी पड़े तो क्या चिन्ता है। अब इस स्थान को अभी छोड़ देना चाहिये। रामसिंह! आप स्त्रियों को लेकर जंगली रास्ते से आगे बढ़ैं, हमलोग पीछे पीछे आते हैं; यदि शत्रु पास पहुंच भी जांयगे तो हम लोग थोड़ी देर तक अटका रक्खेंगे तब तक आप स्त्रियों को सुरक्षित स्थान में पहुंचा दीजियेगा॥

(नेपथ्य में)

धन तुव हृदय प्रताप, तजे सबै जग के सुखनि।
सहत दुसह संताप, पै न तजत निज धर्म हठ॥ १॥

(एक ओर से प्रतापसिंह तथा सर्दारों का और दूसरी ओर से रामसिंह का वेग से जाना)

तृतीय गर्भाङ्क।

(स्थान जंगली कुंज--एक स्वच्छ शिलाखंड)

(मालती और गुलाबसिंह)

गुलाब। प्यारी मालती ! तुम हमारे कारन बड़े दुःख उठा रही हो ? आहा ! यह सुकुमार अंग और यह कठिन तापस व्रत !

मालती। देखो जी, तुम हमें बार बार लजाया न करो, भला मैं ने ऐसा क्या किया है जो तुम सदा ऐसे ही कहा करते हो? धन्य तो है तुमारा यह असीम साहस॥

गुलाब। हमारा साहस ? हमारा साहस भी क्या अपने मन से है? उसकी जड़ भी तो तुम्हीं हो ?

मालती। चलो, चलो रहने दो बहुत बातें न बनाओ। देखो हमने यह जंगली फूलों की एक माला बनाई है लाओ तुम्हें पहिरावें; देखें कैसी लगती है॥

गुलाब। (अलग खड़े होकर) नहीं--नहीं--मालती! अभी नहीं॥

जब लौं निज बल को फल इनकों नाहिं चखाऊं।
म्लेच्छ ध्वजा कों काटि न जब लौं भूमि गिराऊं॥
आर्य धर्म की जय ध्वनि सों सब जगत कंपाऊं।
निष्कंटक मेवार देश जब लौं न बनाऊं॥
तब लौं सुख करि सामुहे तुमसों कबहुं न भाखिहौं।
अरु कोमल कर परस कों मन मैं नहिं अभिलाषिहौं॥१॥

(नेपथ्य में)

वीर हृदय जो कछु कहै फबै सबै तेहि सांच।
पै न फबै सुख बिलसिबो जब लौं बुझै न आंच॥

गुलाब। (धीरे से, दांत के नीचे जीभ दाब कर) अरे कविराज जी को हमलोगों का यहां रहना कैसे विदित हो गया ? देखो कैसी चितावनी दे रहे हैं ? अच्छा प्यारी मालती ! अब बिदा दो मुझे छद्म बेष करके उदयपुर जाना है, क्योंकि

बरसात आगई देखैं मुसल्मानी सेना क्या कर रही है ॥

मालती। हां इसमें देर न करनी चाहिये, मा दुर्गा सदा तुम्हारी रक्षा करैं ॥

(गुलाबसिंह धीरे धीरे सतृष्णनेत्र मालती की ओर मुड़ मुड़कर देखते हुए जाते हैं)

मालती। धन्य गुलाबसिंह धन्य! यह तुम्हारा ही काम है। इस कठिन परीक्षा में ठहरना सहज नहीं है। हाय! मुझ अभागिन के कारन तुम्हें इतने कष्ट भोगने पड़ते हैं। पर मालती! तू भी धन्य है जो तूने अपना हृदय ऐसे वीर हृदय को सौंपा है। (आंखों में आंसू डबडबा आते हैं) आहा! कितने साध से यह बनैले फूलों की माला गांथी थी पर हाय! एक क्षण भी मैं इसे उनके गले में पहिरा कर अपनी आंखों को ठंढी न कर सकी! तो चलैं अब इसे मा विपत्तिविदारिनी ही के चरणों में अर्पण करके उनकी मंगल प्रार्थना करें। (चौंक कर) और क्या उन्हें इस विपत्ति में अकेले ही जाने देना चाहिये? नहीं नहीं मैं भी चुपचाप उनके पीछे पीछे भेष बदल कर चलूं ॥

(नेपथ्य में)

धन्य देस मेवार वारिये तुम पैं सब जग।
जहं फूले ये फूल किये सौरभ मय सब मग ॥
धन्य वीर परताप थाप तुव न्याय विराजै।
जासु सहायक ऐसे तिन्हें अकर कहा काजै ॥
रे कवि तुव जन्म सुफल भयो करि सेवकाई वीर की।
धन वाणी कहि विरुदावली धर्म धुरंधर धीर की ॥१॥

(मालती का प्रस्थान)

(चतुर्थ गर्भाङ्क)

(स्थान जंगली प्रांत — राजकुमार, राजकुमारी भील बालक

बालिका तथा राजपूत बालक)
(राजकुमार के सिर पर फूलों की कलग़ी तुर्रा और गले में जंगली फूलों के हार— राजकुमारी के सब अंगों में फूलों का शृंगार—कुमार पत्थर के शिलाखंड पर बैठे हैं, दो भील बालक बांस के मोटे मोटे लट्ठों के आसा बनाकर आगे खड़े हैं, एक ताड़ का छाता राजछत्र के बदले में लिये-पीछे खड़ा है)

एक चोबदार (आगे बढ़कर) घणीखमा, अन्नदाता, ढिल्ली से पाच्छाह, का एक दूत आया है॥

कुमार। (बे पर्वाई से) आने दो॥

(सन को रंग कर कृत्रिम डाढ़ी लगाये एक दूत का प्रवेश)

दूत। (सलाम करके) हजूर—हमको डिल्ली के पाच्छा छला-मत भेजा है॥

कुमार। (टेढ़ी दृष्टि से देख कर) अच्छा तुम्हारा पाच्छा क्या बोला?

दूत। पाच्छा बोला है कि आप हमसे क्यों लड़ाई करता है, इसमें बर नहीं आवेगा इससे हम जो चाहा था उसके करने से हम आपको सबसे बड़ा मन्सब देगा ?

कुमार। (बड़े ही क्रोध से) कोई है इस बेअदब बे तमीज को मुंह काला करके हमारे शहर से निकाल देव॥

(चारो ओर से सब लड़के "जो हुकुम" "जो हुकुम" कर के कूदते ताली बजाते इकट्ठे हो जाते हैं और दूत को मारते घसीटते नाचते कूदते ले जाते हैं। दूत दोहाई दोहाई पुकारता जाता है)

कुमार। कोई है। सेनापति को बुलाओ।

एक चोबदार। जो हुकुम अन्नदाता।

(जाता है और सेनापति को लाता है। सेनापति चीथड़े का पक्कला सिर में लाल कपड़े की पट्टी बांधे कमर में तल-

वार लटकती, आकर प्रणाम करके अदब से खड़ा होता है)

कुमार। देखो सेनापति, डिल्ली का पाच्छा अब बड़ी बेअदबी करने लगा, उस पर फ़ौज लेकर अभी चढ़ाई करो।

सेनापति। जो हुकुम अन्नदाता—

(ताड़ की पोपली बिगुल की तरह बजाता है)

(चारो ओर से कूद कूद कर सब लड़के इकट्ठे हो जाते हैं और एक ओर राजपूत बालक और दूसरी ओर भील बालक श्रेणीबद्ध होकर फ़ौज की नाईं खड़े हो जाते हैं। सेनापति सभों से क़वायद कराता है और कुमार की सलामी उतरवा कर आगे आगे सेनापति पीछे पीछे श्रेणीबद्ध सेना जाती है)

राजकुमारी। (बालिकाओं के प्रति) अरी तुम सब खड़ी मुंह क्या देख रही हो, जब तक फ़ौज डिल्ली जीत कर आवै तुम सब दर्बार के आगे नाचो गाओ (सब लड़कियें मंडल बांध कर नाचती गाती हैं)

जियो जियो मेवाड़ना महाराजा — जियो—

मेवाड़ना महाराजा, मेवाड़ना महाराजा

जियो जियो।

राजपूत कुल ना रखवारा, भारत ना सिरताजा

जियो जियो।

लाओ लाओ सइयो, चुनि चुनि कलियां, रंग रंग अभरन काजा।

अपणा धणी ने रचि पहिरावां, मंगल रूप विराजा॥

जियो जियो।

("एक लिङ्ग जी की जय" "मेवाड़ की जय" "राना की जय" इत्यादि कोलाहल करते नाचते कूदते लड़कों की सेना का प्रवेश)

(सब नाचते और गाते हैं)

"सीपाहियां नो कलो बनतो आवेरे महाराजा।

आवी लागी दरवा पेले काठे रे महाराजा ॥
नीला पीला तंबुड़ा खींचावीरे महाराजा ।
रूपा केरी खूंटा धमकावो रे महाराजा ॥
सीना केरी डोरें बिछावो रे महाराजा ।
गोड़ीला बलाओ रावली पाएगा रे महाराजा ॥
गोड़ीला छुड़ाओ हरआ मुंगीरे महाराजा ।
हाथीड़ा नीरांवो छुटा सुरसा रे महाराजा ।
ऊटींआं ने नाखो कड़वा नीवं रे महाराजा ॥
सरदारा ने देवो चावल चोषा रे महाराजा ।
सीपाआने देवो तोल मां भाता रे महाराजा ॥
फौजां में तो वतरी बाजा बाजेरे महाराजा ।
बाजारे बाजे भवाआं नाचेरे महाराजा ॥" *

(सेनापति आगे बढ़कर कुमार को सलाम करके) घणी खमा अन्नदाता, डिल्ली की फ़तह मोमारक ।

कुमार। (प्रसन्नता पूर्वक) साबास, साबास, डिल्ली फ़तह कर आये ! पाच्छा क्या हुआ ?

सेनापति । धर्मावतार । पाच्छा श्री ज़ी हुजूर की डर से आगरे भाग गया ।

कुमार । कुछ पर्वा नहीं, भागने वाले को भागने दो

(एक भील बालक आगे बढ़कर)

अब हम दर्बार को तिलक करेंगे ।

(एक राजपूत बालक आगे बढ़ कर)

नहीं, नहीं, तुम मेवाड़ की गद्दी का तिलक कर सकते हो डिल्ली के फ़तह का तिलक हम करेंगे, हम भाई बेटे हैं ।

(दोनों आपस में द्वंद युद्ध करते हैं । कुमार दोनों को छुड़ाते हैं)

---

*यह भीलों की गीत मित्रवर कुंवर योधसिंह मेहता द्वारा प्राप्त हुई है ॥

कुमार। (राजपूत बालक से) सुनो भाई, आपस में लड़ते क्यों हो; तुम तो हमारे संगही हो, हमको तिलक हुआ तो तुमको हुआ। पर तिलक करने का अधिकार बहादुर भील सरदारों ही को है।

(भील बालक "जय हिन्दूपति की" कहते और तिलक करते हैं। सब लोग नज़र में फल, फूल, दही आदि पेश करते हैं और कुमार किसीको 'पंच हज़ारी' किसीको 'सेह हज़ारी' किसीको 'हज़ारी' आदि पदवी वितरण करते हैं

(पटाक्षेप)

पंचम गर्भाङ्क

(स्थान उदयपुर क़िला का एक भाग)

(पांच चार मुसल्मानों की गोष्ठी)

(कोई शराब के प्याले ढाल रहा है और कोई अफ़ीम घोल रहा है)

एक। (अफ़ीम घोलते घोलते) अजी हज़त्! अजब मनहूस जगह है — न कोई सैरगाह न कोई दिल्लगी का शग़ल — जी घबरा गया — लाहौल वला कूवत॥

दूसरा। (शराब के झोंक में) और क्या जनाब, जहन्नुम है जहन्नुम — न मालूम क्या क़िस्मत फूटी कि इस जंगलिस्तान में आ फंसे॥

तीसरा। (मोछों पर ताव फेरते हुए) हज़त्, मेरी भी इतनी उम्र हुई, सैकड़ों ही जङ्ग इन्हीं हाथों फ़तह किये मगर जनाब, यह मायूसी, यह कोरा कोरा रहना तो कहीं भी नसीब न हुआ, एक फूटी कौड़ी भी हाथ न आई॥

चौथा। भला यह तो फ़र्माइये, वो इलाहीजान से बड़े बड़े वादे कर आये थे — मीर साहब, अब उन्हें क्या मुंह दिखा-

डूबेगा ?

मोर साहब। (रोना सा मुंह बना कर) जनाब कुछ न पूछिये, मेरी तो इसी फ़िक्र में रूह फ़िना हुई जाती है – यार जो कहीं वहां खाली हाथों गये तो वह वे भाव की पड़ेंगी कि सर में एक बाल भी न रहने पावेगा॥

खां साहब। भई, बन्द:दर्गाह तो घर में सेंद लगाएगा, बीबी साहबा की नथ तक बेचेगा मगर जनाब वहां झूठा नहीं बनने का – वहां तो जो कह आये हैं खाली हाथ नहीं क़दम रखने का॥

एक। और क्या मर्दों के यही मानी – "जाय लाख रहै साख"

दूसरा। (उसे एक चपत जमा कर) अबे ओ साखवाले धन्ना सेठ के नाती, ज़रा अपनी टोपी तो संभाल फिर लाख की फ़िकिर करना। बचों नामर्दों, अबे जो रंडी ही के सिर न घहराये और उसी से न पुजाया तो मर्दानगी क्या? यार लोग भी कहीं टका दे कर कुछ काम करते होंगे ?

तीसरा। (मोछों पर ताव फेरते फेरते) बहरहाल, यहां से तो खाली हाथों घर चलना मसलहत नहीं॥

(एक मुसलमान घबराया हुआ आता है)

आगन्तुक मुसलमान – अबे पहिले दाढ़ी मोछें तो खैरियत से घर पहुंचा तब दूसरी चीज़ों की फ़िक्र करना॥

तीसरा। (चेहरे का रंग फ़क़ होजाता है) ऐं – ऐं – क्या कहा ? दाढ़ी मूंछ ? अरे क्या हुआ ? क्यों म्यां क्या ग़नीम आये क्या ?

आ० मुसल्मान। पूछता है ग़नीम आये ? अबे आए कि आ पहुंचे – इस साइत में हम सभों का वारा न्यारा है॥

सब। तोब: तोब: या इलाही तू ही मुईनो मददगार है॥

(नेपथ्य में "हिन्दूपति की जय" का कोलाहल)

तीसरा । अरे यार – उस्तरा कहां गया – अरे जल्दी करो नहीं सब मारे जांयगी ॥

मीर । हाय ! बी इलाहीजान, तुमने पहिले ही कहा था ॥

खां साहब । (मीर को एक चपत लगा कर) अबे तुझे इलाही जान को ही पड़ी है — अरे कलुआ कम्बख़ मेरी बीबी से निकाह कर लेगा – हाय ! मैं क्या करूं ?

एक । हाय ! बरसात में यह जंगली रास्ते कैसे तै होंगे ? अरे रास्ता का निशान भी तो मिट गया है – या खुदा क्या इस जंगलिस्तान में कुत्तों की मौत मरना पड़ेगा ?

(नेपथ्य में "एकलिङ्ग जी की जय" और "अल्लाहो अकबर" का कोलाहल और भी निकट आजाता है और सब गिरते पड़ते कांपते हुए भागते हैं)

षष्ठम गर्भाङ्क

(स्थान रणक्षेत्र – कोई सिर कटा, कोई हाथ कटा कोई मरा, कोई सिसकता पड़ा है – शवों की ढेर में जीते और मरों का पता भी नहीं लगता मुमुर्षुओं का आर्तनाद गूंज रहा है – एक सन्यासिनी आकर शवों में किसी को ढूंढ़ रही है)

सन्यासिनी । (उदासी और उत्साह के साथ)

"बताय दे मेरे जोगिया को किन्ने बिलमाया रे – बताय दे मेरे – उनही पर जोग कमाया रे । अंग भभूत गले मृग छाला घर घर अलख जगाया रे"

गुलाबसिंह । (मुमुर्षु अवस्था में पड़ा हुआ टूटे फूटे स्वर से) हैं – यह असमय अमृत वर्षा कहां से ? मन ! अपने को संभाल – भला इस भयानक रणभूमि में प्यारी मालती कहां ?

मालती । (दौड़ कर, गुलाबसिंह के मस्तक को अपनी गोद में रखकर) नाथ आप घबरांय नहीं, सचमुच मैं ही हूं—मालती—अब आप का शरीर कैसा है ?

गुलाबसिंह । बहुत अच्छा—जो कसर थी वह भी पूरी हुई—आहा !

जनम भूमि अरु स्वामिहित रण गंगा में न्हाय ।
तजत प्रान प्रिय अंक में सो सम कौन लखाय ॥

(राणा जी राजवैद्य को साथ में लिवाये हुए घबराये से आते हैं)

राणा । वैद्यराज ! आज जो आप गुलाबसिंह को बचा सकें तो मैं आपका सदा ऋणी रहूंगा—आहा ! आज के युद्ध में गुलाबसिंह की वीरता प्रशंसनीय थी, और मुझे बचाने ही में उसकी यह दशा हुई । गुलाबसिंह की रक्षा होने से मुझे चित्तौर की रक्षा से भी अधिक आनंद प्राप्त होगा ॥

वैद्य । हुकुम अन्नदाता, मेरे पास वह जड़ी बूटी हैं कि जो तन में प्राण होगा तो बचने में कोई सन्देह नहीं ॥

राणा । (मालती को देखकर) बेटी मालती ! तू यहां कहां ? धन्य तेरा प्रेम ॥

गुलाबसिंह । (राणा का पैर छूकर टूटे फूटे स्वर से) स्वामिन् ! आपने क्यों कष्ट किया ? आहा मुझसे तुच्छ पर इतनी कृपा !

वैद्य । (गुलाबसिंह की नारी तथा घावों को देखते है)

(नेपथ्य में गान)

जियो जुगजुग जग ऐसे वीर ।
जे निज देश, स्वामी हित कारन गिनत न अपनी पीर ॥
धन धन ते रमनी जे पति सों मिलत मनौं पय नीर ।
धन्य स्वामि जिनके सेवक हित निसिदिन प्राण अधीर ॥१॥

(धीरे धीरे परदा गिरता है)

सप्तम अङ्क

प्रथम गर्भाङ्क।

(स्थान उदयपुर का जङ्गली मैदान)

[बादशाही फ़ौज—मुहब्बत खां और फ़रीद खां]

मुहब्बतखां। छि! तुम लोगों ने क्या बहादुरी का नाम डुबाया उदयपुर दुश्मनों के हाथ छोड़ते तुम्हें शर्म न आई ?

फ़रीदखां। हुजूर, बजा इर्शाद, मगर मौसिमे बरसात इस मुल्क में हम अजनबियों को क़यामत का सामना है, एक तो कमबख़्त नहरू का मर्ज़ क़रीब क़रीब निस्फ़ फ़ौज को तंग किये था, दूसरे हम लोग यह समझकर कि अब शिकस्त पर शिकस्त खाकर ये मर्दूद पस्त होगये होंगे इत्मीनान से थे, और कहीं इनका नामोनिशान भी न था मगर ख़ुदा की पनाह, न जाने किस खोह से ये टिड्डी दल की तरह हम लोगों पर आ गिरे; हालांकि हम लोगों के बहादुरों ने जी छोड़कर मुक़ाबिला किया। मगर उन बेशुमार जरीर राजपूतों और भीलों के सामने कहां तक ठहर सकते थे, पैर उखड़ गये, जनाबेआली, हम लोग तो ख़ुद ही निहायत नादिम हैं॥

मुहब्बतखां। ख़ैर, कुछ मुज़ायक़ः नहीं, "गुज़श्तः रा सलवात आइन्दः रा इहतियात" हालांकि जहांपनाह निहायत ही ग़ज़बनाक थे मगर हम लोगों ने उनके गुस्से को यही वजूहात दिखला कर फ़रो कराया, अब हुक्म दिया है कि अगर इस जङ्ग में सच्ची बहादुरी का सुबूत मिलेगा और उदयपुर फ़तह करके आवेंगे तो सब गुनाह मुआफ़ फ़र्माई जायंगी और आला मनसब दिये जांयगे, वरनः हमारे रूबरू आने की ज़रूरत नहीं॥

फ़रीदखां । खुदावन्द, इन्शाअल्लाहतआला अब ऐसा ही होगा॥

(नेपथ्य में "राणा प्रतापसिंह की जय" का कोलाहल)

मुहब्बतखां । (फ़ौज की ओर फिर कर) देखो बहादुरो, दुश्मनों की फ़ौज आ पहुंची, अब तुम्हारे आज़माइश का वक्त है, नमक अदा करने और बिहिश्त हासिल करने का यही वक्त है ॥

(नेपथ्य से गुलाबसिंह अट्टाट्टहास्य करते हुए)

" और दोज़ख़ में जाने का यही वक्त है " [मुसलमान सेना " काफ़िर काफ़िर " पुकारती हुई बड़े जोश के साथ एक ओर से जाती है दूसरी ओर से राणा की सेना आती है आगे आगे कविराजा जी]

कविराजा :—

चलो चलो सब बीर चलो घन घोर युद्ध करि ।
मेटैं हिय की कसक यवन हिय आजु पांय दरि ॥
देखो देखो मातु कालिका जीभ निकारैं ।
यवन रुधिर प्यासी सुलोल जिह्वा चटकारैं ॥
वह देखो तुव प्रभू प्रताप निहारत तुव मुख ।
है तुम्हरे ही हाथ आत्मगौरव मेवार सुख ॥
निज पुरुषन को करो याद जिन सह्यो सबै दुख ।
पै न तज्यो स्वाधीनपनो छोड्यो जग के सुख ॥
बढ़ो बढ़ो सब बीर आर्य्य ध्वज नभ फहरावैं ।
चढ़ो चढ़ो सब बीर यवन ध्वज धूरि मिलावैं ॥
लरो लरो सब बीर आर्य पौरुष दिखरावैं ।
धरो धरो सब बीर यवन धरि दास बनावैं ॥
तरो तरो सब बीर युद्ध गंगा मैं न्हावैं ।
करो करो सब बीर अकर कर कीर्ति बढ़ावैं ॥
अरो अरो सब बीर यवन पग आजु डिगावैं ।

परौ परौ सब वीर शत्रु के पीछे धावैं ॥
हरौ हरौ सब बीर देस दुख आजु नसावैं ।
मरौ मरौ सब वीर

[अचानक नेपथ्य से एक गोली आकर कविराजा
को लगती है और गिरते गिरते]

कविराजा । स्वर्ग चलि आजु बसावैं ॥

(सब आवेश में आकर नेपथ्य में शाही फ़ौज पर टूटते और
कुछ लोग कविराजा के मृत शरीर को लेकर नाचते कूदते)

क्षत्रियगण । चलो, चलो, "स्वर्ग चलि आजु बसावैं"

(नेपथ्य में "श्री एकलिङ्ग की जय"
"अल्लाहो अकबर" का कोलाहल)

पटाक्षेप

द्वितीय गर्भाङ्क ।

[स्थान जङ्गली मार्ग—कई भील सिर पर बड़े
बड़े पिटारे लिये घबराये हुए आते हैं]

एक भील । चलो, चलो, भाइयो पैर बढ़ाये चलो ॥

(एक पिटारे के भीतर से रानी)

अरे दर्बार कहां हैं ? उनकी क्या दसा है ?

दूसरा भील । चुप, चुप, माजी चुप, अभी दुसमन दूर नहीं हैं, अभी सांस न लेना ॥

तीसरा भील । मा, दर्बार के लिये कुछ चिन्ता न करना, जब तक एक भी भील बच्चा जीता रहेगा आपलोगों में से किसी का एक बाल भी न खसने पावेगा ॥

[नेपथ्य में "धन्य स्वामिभक्ति"]

सब भील । अरे कौन आया ? चलो चलो जल्दी भागें ॥

(सब भागते हैं—वीर वेष से बहुत ज़ख़्मी
गुलाबसिंह का प्रवेश)

गुलाबसिंह। धन्य स्वामिभक्ति धन्य, आहा ये गंवार इस समय प्रभु को कैसी सेवा कर रहे हैं! धिक्कार है हमलोगों को कि प्रभु के एक काम न आए। न जाने कहां दरबार पड़ गये हैं बहुत खोजा कहीं पता न लगा, हाय! हे दीनानाथ, प्रतापसिंह की रक्षा करना इस समय हिन्दू मान गौरव का एक वही आश्रय है, उसे भी न छीन लेना॥

(नेपथ्य से)

छि! प्रभु को अकेले छोड़ क्या कायरों की तरह बड़बड़ा रहे हो? अरे जाओ, जल्दी जाओ, या तो राणा की रक्षा करो, या वहीं तुम भी उनका साथ दो।

गुलाबसिंह। (चौंक कर) हैं! इस असमय में यह अमृत वर्षा किसने की? (नेपथ्य की ओर देख कर) आहा! प्यारी मालती के बिना और किसका इतना उदार हृदय होगा? धिक्कार है हमको कि दरबार विपत्ति में फंसे हैं और हम प्राण लेकर यहां खड़े हैं॥

(जाने के लिये उद्यत होता है और आगे की ओर
देखकर प्रसन्नतापूर्वक)

अहाहा! वह देखो राणा जी तो भील वेष में चले आ रहे हैं – जान पड़ता है प्रभु भक्त भीलों ने अपने को राणा बना दर्बार को अपने वेष में बचाया – धन्य भील जाति धन्य – आज तुम्हारा जन्म सुफल हुआ, अब जो तुम्हें नीच कहैं वह आप नीच – चलैं हम भी प्रभु की सेवा करैं॥

(गुलाबसिंह जाता है)

तृतीय गर्भाङ्क ।

(स्थान घोर जंगल—एक गुफा की चट्टान पर राणा जो सोये हैं और रानी पैर दाब रही हैं)

रानी । (मन ही मन) हाय ! यह देवतुल्य शरीर इस घोर जंगल में इस पत्थर की सेज पर सोने योग्य है ? जिसे सैकड़ों ही दास दासी अपनी सेवा से प्रसन्न नहीं कर सकते थे उसे मैं जिसे कभी सेवकाई सीखने का काम न पड़ा, कैसे प्रसन्न कर सकती हूं ? तिसपर इन बालकों के लालन पालन से और भी समय नहीं मिलता कि इनकी कुछ सेवा कर सकूं (राणा की ओर सजलनेत्र से देख कर) नाथ ! इस अभागिनी के कारन आपको बहुत दुख सहने पड़ते हैं चमा करना, हाय ! मैं तुम्हारी कुछ सेवा नहीं कर सकती, मैं जब से तुम्हारी सेवा में आई दुःख ही देती रही, हाय ! मैं इस का क्या उत्तर परमेश्वर को दूंगी ? जो मैं अभागिन आज मर भी गयी होती तो तुम्हारी बहुत चिन्ता कम होजाती, मेरी ही रच्छा के लिये तुम्हें सदा हैरान रहना पड़ता है (आंख पोंछती है)

(राजकुमारी आकर रानी के गले से लिपट कर)

मा, बड़ी भूख लगी है ॥

रानी । बेटी, अभी थोड़ी ही देर न हुई है कि तुमने खाया है ॥

रा॰ कु॰ । हूं-हूं आधिये तो रोटी दिया था उससे पेट तो भराही नहीं, फिर बड़ी भूख लगी है ॥

रानी । अच्छा, हौरा न कर, नहीं दर्बार की नीद खुल जायगी ॥

रा॰ कु॰ । (धीरे से) मा, दर्बार उदयपुर कब चलेंगे ?

रानी । (आंखों में आंसू भर कर) जब भाग ले जाय ॥

रा॰ कु॰ । अच्छा खाने को तो दे, अब भूख नहीं सही जाती ।

रानी । प्रान मत खा, जा उस पत्थर के नीचे आधी रोटी ढकी

है उसे खा न ।

रा॰ कु॰ । मा, घास की रोटी और कब तक खानी होगी यह रोटी तो रूखी खाई नहीं जाती । और कुछ नहीं है ?

रानी । (आंख डबडबा कर) बेटी, जब जो मिले तब उसे प्रसन्न होकर खाना चाहिये, अन्न को ऐसे नहीं कहना ॥

(राजकुमारी जाकर ज्योंही पत्थर उठाती है कि बिल्ली झपट कर उस आधी रोटी को भी खींच ले जाती है, राजकुमारी चीख़ कर रोने लगती है, रानी भी अपने वेग को नहीं रोक सकती फूट कर रो उठती है; राणा चौंक कर खड़े होजाते हैं)

राणा । क्या हुआ ? क्या हुआ ? क्या दुश्मन आये क्या ?

(राजकुमारी की ओर देख कर) बेटी तू क्यों इस तरह रो रही है ?

राजकुमारी (कुछ बोल नहीं सकती रोती हुई उङ्गली से बिल्ली की ओर दिखाती है)

राणा । क्या तेरी रोटी बिल्ली उठा ले गई ?

रा॰ कु॰ (राणा से लिपट कर रोते रोते) ब-ड़ी-भू-ख-ल-गी-है ॥

राणा (वेग पूर्वक आंसू रोक कर स्वगत) हाय, वह प्रताप का हृदय जो कभी बड़े बड़े शत्रु दल में नहीं हिला आज क्यों कांपा जाता है, जो आंखें बड़ी बड़ी विपत्तियों में फंसने और बड़े बड़े दुःख पड़ने पर भी तर न हुईं आज उनमें स्वतः आंसू क्यों उमड़े आते हैं ? (रानी की ओर देख कर) भद्रे ! हमारे हिस्से की रोटी ही तो इसे देकर चुप कराओ, इसके रोने से तो हमारा कलेजा उमड़ा आता है ॥

(रानी निरुत्तर रोती है)

राणा । तो क्या तुम्हारे पास ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे इसको

भूख बुझा सको?

(रानी बड़े वेग से रो उठती है)

राणा। हाय, आज मेवाड़ के राणा की यह दशा हुई कि घास के जड़ की रोटियें भी उसके संतान को प्राप्य नहीं? दीनानाथ! हमने ऐसे कौन से दुष्कर्म किये हैं जो ऐसे दारुण दुःख सहने पड़ते हैं? प्रभु हो! क्या मैं जो इस आर्य भूमि की रक्षा और गौरव बढ़ाने के लिये इतने कष्ट उठा रहा हूं वह तुम्हें नहीं रुचते? जाना, जाना, तुम्हारा कोप इस देश पर है इसलिये अपनी इच्छा के प्रतिकूल कार्य करने के कारण तुम प्रताप पर रूष्ट हो; पर नाथ! इन अबोध बालकों ने क्या बिगाड़ा है जो तुम्हें इनपर भी दया नहीं आती? (उन्मत्त की भांति घूमता हुआ) अच्छा जाने दो, जाने दो, इस अभागे देश को रसातल में जाने दो, मुझे क्या मैं भी न बोलूंगा; तुम्हारी यही इच्छा है तो यही सही—(कुछ ठहर कर) सारा देश अकबर के करतल है, सब क्षत्रिय अपनी स्वतंत्रता, स्वतंत्रता पूर्वक बेच रहे हैं, किसी को कुछ इसकी पर्वा ही नहीं है तो प्रताप, तू क्यों व्यर्थ प्रान दिये देता है—अरे अकेले तेरे किये क्या होगा? क्यों व्यर्थ इन कुसुम सुकुमार बालकों को कष्ट दे देकर सताता है? हाय, यह प्रताप का वज्र हृदय, हिमालय की उच्चतम शिखर से गिराये जाने की चोट सह सकता है, बड़े बड़े गोले, गोली, तीर, कमान, को छाती पर रोक सकता है, इस शरीर को टुकड़े टुकड़े कर डालो यदि मुंह से उफ़ भी निकले ज़ुबान खींच लेना पर हाय, इन सुकुमार अबोध बच्चों के करूण वचन तो सहे नहीं जाते, हृदय को छेदे डालते हैं:—

सहे सबै दुख नेकु न अपुने प्रण तें हटके।

राज गयो, धन गयो, फिरे बन बन में भटके ।
बंधु बांधव कटे आपुने सुतहिं कटायो ।
राखी अपुनी टेक सबै तृण सरिस सहायो ॥
पै हाय सह्यो अब जात नहिं जीवत इन नैननि निरखि ।
इन दूध पीवते बालकनि रोटी हित रोवत बिलखि ॥१॥
प्रभु, अपनी सृष्टि को संभालो, आज अनहोनी हो रही है, वज्र हृदय प्रताप का हृदय आज द्रव हुआ जाता है, आज क्या होनहार है ? (राजकुमारी रोते रोते सो जाती है) आहा ! सचमुच नींद सी सच्ची सहचरी इस संसार में कोई नहीं, देवि ! इस समय, तुमने हमारा बड़ा उपकार किया हम तुम्हें प्रणाम करते हैं (रानी से) तुम यहीं रहो मैं देखूं जो कुछ मिल सके तो लाऊं, नहीं नींद खुलते ही फिर :—

(नेपथ्य में)

अरे राणा जी कहां हैं, जल्दी उन्हें ख़बर दो, शत्रुओं को यहां का भी पता लग गया ॥

राणा। हाय ! अब नहीं सही जाती, और तो और इस भूख की मारी छोकरी को कैसे जगावें ?

(घबराया हुआ बाहर जाता है)

(पटाक्षेप)

चतुर्थ गर्भाङ्क

(स्थान दिल्ली — अकबर का मंत्रणागृह)

(अकबर हाथ में एक पत्र लिये और पीछे पीछे ख़ान-ख़ाना का प्रवेश)

अकबर — क्यों भाई रहीम, क्या फिर कभी वैसी ख़ुशी हासिल होगी, जो हमलोगों को बचपन में उस रेगिस्तान और

जंगलों के खेल में हासिल होती थी ? वह जेठ बैसाख की धूप और वह तपी हुई रेत, हमलोगों को गोया क्वार कातिक की चांदनी और जमना किनारे की सर्द और मुलायम बालू जान पड़ती थी !

ख़ानख़ाना—और उस वक़ के उस खटमिट्ठे जंगली वेर, और चना के साग में जो मज़ा आता था वह इस वक़ इन इन्तिहा के लज़ीज़ खानों में नसीब नहीं। क्यों याद है, उस रोज़ जो दरख़ से गिरे थे ?

अकबर। खूब—अरे यार कुछ न पूछो, एक तो चोट लगी दूसरे ख़ानबाबा वे भाव की लगे जमाने ॥

ख़ानख़ाना। (कुछ अप्रतिभ होकर) हमारे बाबा का स्वभाव ज़रा गुसवर था ॥

अकबर। हज़त् कुछ यह भी ख़बर है अगर उनकी तालीम न होती तो आज हमको आपको यह दिन भी न मयस्सर आते—बाबा, उस वक़ कैसी मुसीबत में थे, ख़ानबाबा को उधर उनकी दिलजोई करनी, इधर हमलोगों की ख़बरगीरी करनी और साथ ही फिर सलतनत हासिल करने की कोशिश करनी ॥

(नेपथ्य में एकाएकी बाजे बजने लगते हैं और तोपों की आवाज़ होने लगती है)

अकबर। हैं यह एकबारगी क्या हुआ ?

(एक ख़लीता लिये हुए चोबदार का प्रवेश)

चोबदार। [ज़मीन चूमकर]निगाह रूबरू ख़ुदावन्द नेआमत दौलत दराज़, जानोमाल की ख़ैर—अभी एक सांड़नी सवार उदयपुर से आया है,यह ख़लीता लाया है। और सारे शहर में शादयाना मचाया है ॥

[अकबर ख़लीता खोलकर पढ़ता है

और मारे आनन्द के उछल पड़ता है]

अकबर । (चोबदार को अपने हाथ की एक अंगूठी देकर) जाओ, अभी उस क़ासिद को सोमोज़र से मालामाल करो, जश्ने नौरोज़ की तयारी हो, शहर में आज रोशनी होने का हुक्म जारी हो ॥

[चोबदार ज़मीन चूमकर जाता है]

ख़ानख़ाना । खुदावन्द, इस ख़त के मज़मून को जानने के लिये जी उमड़ा आता है ॥

अकबर । (ख़त देते हुए) यह लो, मेरे हिन्द के बादशाह होने की सनद देखो ॥

[ख़ानख़ाना पत्र लेकर पढ़ते हैं, पृथ्वीराज आते हुए दिखाई देते हैं]

पृथ्वीराज । (आप ही आप) सुना है आज सूर्य नारायण अपना राज्य निशिनाथ को देकर बंगाले की खाड़ी में निवास के लिये चले जा रहे हैं । राणा प्रतापसिंह ने मुग़लराज से सन्धि प्रस्ताव किया है । देखें यह बात कहां तक सही है ।

(आगे बढ़ कर अकबर को सलाम करता है)

अकबर । अख़ूख़ाह । आइये महाराज, लीजिये आपके राना उदयपुर ने यह सुलह का पैग़ाम दिया है । आपको मुबारक हो (पत्र पृथ्वीराज को देता है)

पृथ्वीराज । (पत्र पढ़कर)

भूखे प्राण तजै भलें, केशरि खर नहिं खाय ।
चातक प्यासो ही रहै, बिना स्वाति न अघाय ॥
बिना स्वाति न अघाय, हंस मोती ही खावै ।
सती नारि पति बिना, तनिक नहिं चित्त डिगावै ॥
त्यों परताप न डिगै होंय सब ही किन रूखे ।
अरि सनमुख नहिं नवै फिरै किन वन वन भूखे ॥

अकबर। तो क्या आपको इस खत में कुछ शक है

पृथ्वीराज। खुदावन्द पूरा शक है, क्योंकि:--

वरु दिनकर पच्छिम उए, ग्रहपति पूर्व अथांय।
सागर मर्यादा तजै पंकज गगन लखांय॥
पंकज गगन लखांय, केसरी खर वरु खावैं।
नभ नछत्र कर मिलैं, केटलो फेरि फरावैं॥
जब लौं तन मैं प्रान, प्रान मैं वुद्धि रतिक भर।
तजै न हठ परताप उए पच्छिम वरु दिनकर।

अकबर। तो आपका शक किस तरह रफ़ः हो सकता है।

पृथ्वीराज। जब तक मैं खुद न तसदीक़ करलूं।

अकबर। क्या मुज़ायक़ा है आपका जैसे जी चाहे इत्मीनान करलें।

(पृथ्वीराज कृतज्ञता पूर्वक सलाम करके एक ओर से जाता है और दूसरी ओर से अकबर ख़ानख़ाना जाते हैं)

पंचम गर्भाङ्क

(स्थान अरवली पार्वत्य प्रांत)

(राणा प्रतापसिंह अकेले घूम रहे हैं)

राणा। हाय, मेरा इतना किया सब नष्ट जाता है, एक काम न आया, जिस निर्दय दैव ने मुझे इस विपत्ति सागर में डाला उसीने न जाने इस समय कैसी मोहिनी माया मेरे हृदय पर डाल रक्खी है जो मेरी वुद्धि में ऐसा विपर्यय हो रहा है – हाय, प्रताप, तू भी अब यवनों का दास बनेगा! अरे तुझे भी अब दिल्ली में सलाम बजानी पड़ेगी! देख, तेरे इस कर्म से आज कुल गुरु सूर्य नारायण का मुख भी मलिन हो रहा है – (सूर्य नारायण की ओर देख कर) देव! रक्षा करो – अपने कुल :—

(गुलाबसिंह का एक पत्र लिये हुए प्रवेश)

गुलाबसिंह—(हाथ जोड़ कर) घणीखमा अन्नदाता, दिल्ली से कुंवर पृथ्वीराज जी का यह पत्र लेकर एक दूत आया है।

राणा। (आग्रह पूर्वक) पढ़ो, पढ़ो हमारे विपत्ति सहचर पृथ्वीराज क्या लिखते हैं?

(गुलाबसिंह पत्र पढ़ते हैं)

स्वस्ति श्री अरबली बली जन आश्रय दायक।
जहां बसत परताप शत्रु हिय ताप विधायक॥
पराधीन दिल्ली बासी नित दास वृत्तिकर।
महा अधम पृथिराज छुअत तुव चरन पुण्यतर॥
अब कुशल कहां इत है रही गयो विदा ह्वै कै कबै।
उत रही कछुक भाजत सोज रुख प्रताप मोस्यो जबै॥१॥
बूड़े राज समाज, दिल्ली यवन समुद्र मैं
आरज गौरव लाज, इक राखो परताप तुम॥२॥
अकबर परम प्रवीन, राजपूत दागिल किये।
इक मिवार दागी न, तुव प्रताप बल कारनै॥३॥
दिल्ली रूप बजार, बिकीं सबै कुल कामिनी।
वीर रहे सिर डार, राणावत ही इक बची॥४॥
छत्र छेत्र निःछत्र, भयो होत निहचय कबै।
जौ न धरत सिर छत्र, परम हठी परतापसिंह॥५॥
खोये राज समाज, असन बसन खोये सबै।
खोये सब सुख साज, पै राखी जातीयता॥६॥
लै परताप उछंग, जननी जन्म सुफल भयो।
अकबर काल भुअंग, कुचले फन जिन पग तरैं॥७॥
जदपि न राज समाज, फिरत सहत दुख बनहि बन।
तउ न तजो कुल लाज, विमल कीर्ति छाई जगत॥८॥
सबै अचंभो होय, कौन सहाय प्रताप को।

सांच सहायक कोय, वीर हृदय, असि वीर सम ॥९॥
अब लौं तजो न टेक, धर्म, मान, स्वाधीनता।
डिगन दियो नहिं नेक, अभिमानी परताप नैं ॥१०॥
सुनत हाय कह आज, प्रलय होन चाहत कहा।
राना छोड़त लाज, झुकत जु अकबर सामुहे ॥११॥
दिल्ली के दर्बार, झुकि है सिर मेवार को।
दिल्ली रूप बजार, शोभित राणावत करै ॥ १२ ॥
जननि धरित्री हाय, क्यों न फटत तू तुरत ही।
पृथ्वीराज समाय, सुनै न फिर ये दुखद बच ॥ १३ ॥
देखु प्रताप विचारि, नासमान संसार यह।
यह जीवन दिन चारि, क्यों सुख हित कीरति तजत ॥ १४॥
देखौ, सांचे वीर, एक आस गुन तुव गहे।
जीयत धरि जिय धीर, सो आसा जिन तोरिये ॥ १५ ॥
यह दिन द्वै सुख काज, कीरति अक्षय जिन तजहु।
क्षत्रिय लाज जहाज, यवन समुद्र न बोरिये ॥ १६ ॥
जो पवित्रतर मान, रच्छ्यो सहि सहि असह दुख।
सो न दीजिये जान, दिल्ली की बाजार मैं ॥ १७ ॥
सिला सिला टकराय, टूक टूक रोटी बिना।
भूखन किन मरिजाय, संग स्वतंत्रता अतुल धन ॥ १८ ॥
तुव पुरखे निज छाप, जो रच्छ्यो निज सीस दै।
सो बेचत परताप, क्षणिक सुखहि के कारनै ॥ १९ ॥
नासमान करि आस, अविनासी की आस तजि।
नासमान सुख रास, बुद्धिमान राना चहत ॥ २० ॥

इक दिन अकबर नाहिं, मुगल राज्य हू नहिं रहै।
तुव कीरति रहि जाहि जब लौं भारत नाम थिर ॥ २१ ॥
ह्वै है वह दिन एक, जब अकबर हूं नहिं रहै।
रखि हैं कुल की टेक, सब क्षत्रिय तुव सरन गहि ॥ २२ ॥

खोवहु जिन निज धीरता, धोवहु जिन निज लाज।
सोवहु जिनि सुख सेज पैं, जब लौं सरै न काज॥
जब लौं सरै न काज, न तब लौं थिर ह्वै रहिये।
जो दुख सिर पैं परै धीर ह्वै सब कछु सहिये॥
अहो वीर परताप, हृदय दुर्बलता गोवहु।
उठौ उठौ कटि कसौ क्लीवता जड़ सों खोवहु॥ २३॥
और अधिक हम कह लिखैं, तुम हो परम सुजान।
मान राखिये आपुनो, हंसै न जासों मान॥२४॥ *

* खेद का विषय है कि पृथ्वीराज के पत्र की मूल प्रति हमें प्राप्त न हो सकी। उदयपुर से भी नैराश्य पूर्ण उत्तर मिला। बाबू गोकर्णसिंह जी बांकीपुर निवासी द्वारा केवल ये आठ सोरठे और दोहे मिले:—

सोरठा

अकबर घोर अधार, ऊघाणा हिन्दू अवर।
जागै जग दातार, पोहरै राण प्रताप सी॥ १॥
अकबरिये इण बार, दागिल की सारी दुणी।
अण दागिल असवार, चेटक राण प्रताप सी॥ २॥
अकबर समद अथाह, सूरायण भरियो सुजल।
मेवाड़ो तिण माह, पोयण फूल प्रातप सी॥ ३॥
चाईं हो अकबरियाह, तेज तिहारो तुरकड़ा।
नमि नमि नीसरियाह, राण बिना सहराजवी॥ ४॥
चोथो चीतोड़ाह, बांटो बाजंती तणूं।
दीसे मेवाड़ाह, तो सिर राण प्रताप सी॥ ५॥

दोहा

जननी सुत अइडा जणे, जहड़ो राण प्रताप।
अकबर सूतोहि ओझके, जाण सिराने साप॥ ६॥

सोरठा

पातल पाघ प्रमाण, सांची सांगा हरतणी।
रही अभीगत राण, अकबर सूं व भी अणी॥ ७॥
सोवै सहसंसार, असुर पलीलै ऊपरै।
जागै तू निणधार, पोहरे राण प्रताप सी॥ ८॥

प्रतापसिंह – (क्रोध पूर्वक, मोछों पर हाथ फेरता हुआ)

अरे अधम प्रताप धिक्कार है तुझको ! छि !

"पराधीन ह्वै कौन चहै जीवो जग मांहो।

को पहिरै दासत्वशृंखला निज पग मांही॥

इक दिन की दासता अहै शत कोटि नरक सम।

पल भर को स्वाधीनपनो स्वर्गहु ते उत्तम॥" *

सुनो सुनो:—

जब लौं तन मैं प्राण न तब लौं सुख को मोड़ौं।

जब लौं कर मैं शक्ति न तब लौं शस्त्रहि छोड़ौं॥

जब लौं जिह्वा सरस दीन बच नहिं उच्चारौं।

जब लौं धड़ पर सीस झुकावन नाहिं विचारौं॥

जब लौं अस्तित्व प्रताप को क्षत्रिय नाम न बोरिहौं।

जब लौं न आर्य ध्वज नभ उड़े तब लौं टेक न छोरिहौं॥१॥

(नेपथ्य में)

जब लौं जग परताप, क्षत्रियत्व तब लौं अभय।

कौन करत परिताप, परि संसय निर्मूल मैं ?

प्रतापसिंह। आहा ! गुरुदेव अच्छे समय आये चलैं उनसे परामर्श करके पृथ्वीराज को उत्तर लिख दें॥

(प्रस्थान)

षष्ठम गर्भाङ्क

(स्थान मेवाड़ का सीमाप्रांत)

(आगे आगे घोड़े पर सवार राणा प्रतापसिंह पीछे पीछे घोड़े पर कुछ सरदार लोग)

राणा। मेरे विपत्ति के सहायक भाइयो, मेरे साथ तुमलोगों ने बड़े दुःख उठाये। और अंत में अब यह दिन आया कि

---

* "हिन्दी बंगवासी" १२ अप्रैल सन १८९७ से उद्धृत।

मुझ भाग्यहीन के साथ तुम्हें भी अपनी प्यारी जन्मभूमि को छोड़ना पड़ता है । आहा सच है:-

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"

एक सर्दार । अन्नदाता ! यह आपके कहने की बात है । क्या आप अपने लिये यह कष्ट उठा रहे हैं ? जिस जन्मभूमि की रक्षा में आप इतने दुख सह रहे हैं वह क्या हमारी नहीं है ? उसकी रक्षा क्या हमारा कर्तव्य नहीं है ?

राणा । पर भाई इस अधम प्रताप के किये जन्मभूमि की रक्षा भी तो नहीं हुई ? अब तो जन्मभूमि को भी शत्रुओं के हाथ में छोड़कर अज्ञातवास करने चले हैं ?

सर्दार । क्या हुआ पृथ्वीनाथ ! कोई यह तो न कहेगा कि राणा प्रतापसिंह ने सुख की चाह में अपनी जननी जन्मभूमि को यवनों के हाथ बेचा ? परमेश्वर की लीला कौन जानता है, क्या आश्चर्य है कि फिर ऐसा समय आवे जब श्री हुजूर अपने देश को शत्रुओं से लौटा सकें, धर्मावतार, उस समय कलङ्कित पैर से तो इस राज्य सिंहासन पर न चढ़ेंगे ।

राणा । इसमें तो सन्देह नहीं, और फिर अपनी आंखों से अपने देश की यह दुर्दशा देखते हुए जीते रहने से तो अनजाने विदेश में मरना ही अच्छा क्योंकि:—

"मरनो भलो विदेस को जहां न अपुनो कोय ।
माटी खांय जनावरां महा महोच्छव होय" ॥

एक सर्दार । ठीक है: —

"दुरदिन पड़े रहीम कहि दुरथल जैये भाग ।
ज़ैसे जैयत घूर पर जब घर लागत आग" ॥

राणा । सच है अच्छा चलो भाइयो ! चलो, अब इस स्थान को मोह माया छोड़ो (आंखों में आंसू भर कर)

"जेहि रच्छ्यो इच्छाकु सों अब लौं रविकुल राज"।

हाय अधम परताप तू तजत ताहि है आज ॥
तजत ताहि है आज प्राण सम प्यारो जोही।
हे मिवार सुखसार कृपा करि छमियो मोही ॥
रह्यो सदा करि भार काज आयो तुम्हरे केहि।
बिदा दीजिये हमैं भार हलकाय आजु जेहि ॥ १ ॥

(सब लोग सजल नेत्र से बेर बेर पीछे को ओर देखते २ घोड़ा बढ़ाते हैं और दूर से घोड़ा दौड़ाते हाथ उठा कर इन लोगों का रोकते हुए भामाशा दिखाई पड़ते हैं)

भामाशा। (पुकारकर) ओ मेवार के मुकुट ! ओ हिन्दू नाम के आश्रय दाता ! तनिक ठहरो, इस दास की एक बिनती सुनते जाओ। भामाशा को अकेले छोड़ कर मत जाओ,

राणा। (घोड़ा रोक कर) भामाशा, ऐसे घबराये हुए क्यों आ रहे हैं ?

(भामाशा पास आ जाते हैं और घोड़े से कूद कर राणा के पैरों पर रोते हुए गिरते हैं, राणा घोड़े से उतर कर भामाशा को उठा छाती से लगाते हैं; दोनों खूब रोते हैं)

राणा। मंत्रिवर, तुम ऐसे धीर वीर होकर आज ऐसे अधीर क्यों हो रहे हो ?

भामाशा। प्रभो, मेरे अधैर्य का कारण आप पूछते हैं ?
धिक सेवक जो स्वामि काज तजि जीवन धारै।
धिक जीवन जो जीवन हित जिय नाहि बिचारै ॥
धिक सरीर जो निज कर्तव्य विमुख ह्वै बंचै।
धिक धन जो तजि स्वामिकाज स्वारथ हित संचै ॥
धिक देशशत्रु भिरतधन यह भामा जीवत नहिं लजत।
जेहि अछत वीर परताप वर असहायक देशहिं तजत ॥ १ ॥

राणा। परंतु इसमें तुम्हारा क्या दोष है ? तुमने तो अपने साध्य भर कोई बात उठा नहीं रक्खी !

भामाशा। अन्नदाता, यह आप क्या कहते हैं ? परमस्वार्थी भामाशा ने आपके लिये क्या किया ? अरे, आपके अन्न से पला हुआ यह शरीर सुख से कालक्षेप करै और आप बन बन की लकड़ी चुनें और पहाड़ पहाड़ टकरांय! प्रताप सिंह स्वाधीनता रक्षार्थ, हिन्दू नाम अकलङ्कित करणार्थ, देशत्यागी हों और भामाशा अपने जन्मभूमि निवास का स्वर्गोपम सुख भोगै! जिस राणा की जूतियों के कारण भामाशा भामाशा बना है, वही राणा पैसे पैसे को मुहताज हो, सहायता हीन होने के कारण निज देशोद्धार में असमर्थ हो, प्राणोपम जन्मभूमि को छोड़ मरू भूमि की शरण ले, और भामाशा धनी मानी बनकर, ऐसे उपकारी स्वामी की सेवा छोड़ कर, विदेशीय, विजातीय, हिन्दू नाम को कलङ्कित करनेवाले राजा की प्रजा बन कर सुख पूर्वक कालयापन करै! धिक्कार है ऐसे धन पर धिक्कार है ऐसे सुख पर, धिक्कार है ऐसे जीवन पर!!!

राणा। पर भामाशा, तुम इसको क्या करोगे, जो भाग्य में होता है वही होता है; अब तुम क्या चाहते हो ?

भामाशा। धर्मावतार, आज मेरी एक बिनती स्वीकार हो--यही मेरी अन्तिम बिनती है।

राणा। क्या प्रतापसिंह ने कभी तुम्हारी बात टाली है ?

भामाशा। तो अन्नदाता, एक बेर फिर मेवार की ओर घोड़ों की बाग मोड़ी जाय, इस दास के पास जो पचीसों लाख रुपया की सम्पत्ति दर्बार की दी हुई है, उसी से फिर एक बेर सेना एकत्रित की जाय और एक बेर फिर मेवार की रक्षा का उद्योग किया जाय, जो इसमें कृतकार्य हुए तो तो ठीक ही है और नहीं तो फिर जहां स्वामी वहीं सेवक, जहां राजा वहीं प्रजा॥

[राणा सरदारों की ओर देखते हैं]

भामाशा। आप इधर उधर क्या देखते हैं, अरे यह धन क्या मेरे या मेरे बाप का है, यह सभी इन्हीं चरणों के प्रताप से है। मैं तो अगोरदार था अब तक अगोर दिया अब धनी जानै और उसका धन जानै॥

कविराजा। धन्य मंत्रिवर धन्य! यह तुम्हारा ही काम था :—

जेहि धन हित संसार बन्यो बौरो सो डोलै।
जेहि हित वेचत लोग धर्म अपुने अनमोलै॥
जो अनर्थ को मूल सूल हिय में उपजावै।
पिता पुत्र, पति पत्नि, अनुज सों अनुज छुड़ावै॥
सो सात पुरुष संचित धनहिं तृण समान तुम तजत हौ।
धन स्वामि भक्त मंत्रीप्रवर ताहू पैं तुम लजत हौ॥ १॥

[बहुत से राजपूत और भीलों का कोलाहल करते हुए प्रवेश]

सब। महाराज, हम लोगों को छोड़कर आप कहां जा रहे हैं? चलिये, एक बेर और लौट चलिए, जब हम सब कट मरैं तब आपका जिधर जी चाहे पधारैं॥

राणा। जो आपलोगों की यही इच्छा है तो और चाहिये क्या?

चलो चलो सब बीर आजु मेवार उबारैं।
अहो आजु या पुण्य भूमि तैं शत्रु निकारैं॥
चिर स्वतंत्र यह भूमि यवन करसों उद्धारैं।
हिन्दू नामहिं थापि धर्मअरिगनहिँ पछारैं॥
नभ भेदि आजु मेवार पैं उड़ै सिसोदिय कुल ध्वजा।
जा सीतल छाया के तरैं रहै सदा सुख सों प्रजा॥ १॥

(चारों ओर से "महाराणा की जय" "हिन्दूपति की जय" आदि पुकारते हुए लोग उमंग पूर्वक कूदते उछलते हैं और पटाक्षेप)

———

सप्तम गर्भाङ्क

[स्थान दिल्ली—शाही महल]

(अकबर और ख़ानख़ाना)

अकबर। उदयपुर से तो निहायत ही मनहूस ख़बर आई है, राणा के वफ़ादार वज़ीर ने अपनी पुश्तहा पुश्त की कमाई दौलत बेदरेग़ राणा को दे दी है सुना उसके पास इतनी दौलत है जिससे वह पचास हज़ार फ़ौज का बारह बरस तक परवरिश कर सकता है। शाबाश है उसकी दर्यादिली और वफ़ादारी को, आफ़रीन है उसके हुब्बेवतनी और बेदार मग़ज़ी को क्या दुनिया में ऐसे भी लोग हैं ?

ख़ानख़ाना। और सुना है प्रताप बड़े जोश के साथ फ़ौज मुहय्या कर रहा है और जंगजू राजपूत व भील बराबर आते जाते हैं॥

अकबर। वाह रे प्रतापसिंह, मैंने भी बहुत सी तवारीखें देखी हैं मगर इसकी मिसाल मुझे कोई न मिली—शाबाश, ग़ज़ब का बहादुर और ग़ज़ब का जफ़ाकश है॥

ख़ानख़ाना। मगर ख़ुदावन्द अब तो मेरी यही इल्तिजा है कि ऐसे शख़्स को अब ज़ियादा तकलीफ़ न दी जाय हुज़ूर ऐसे बहादुर शख़्स को सताना नाज़ेबा है॥

अकबर। दिल तो हमारा भी यही चाहता है कि अब प्रतापसिंह को बाक़ी ज़िन्दगी आराम से काटने दें। राजा पृथ्वीराज आते हैं देखें इनके पास राणा का जवाब क्या आया है।

[पृथ्वीराज का प्रवेश]

अकबर। आइये राजा साहब तशरीफ़ रखिये, कहिये उदयपुर से कुछ जवाब आया ?

पृथ्वीराज। हां जहांपनाह, राणा जी लिखते हैं कि "मैंने कभी संधि की प्रार्थना नहीं की, मेरी यदि कोई प्रार्थना है

तो यही है कि अकबर स्वयं युद्ध स्थल में आवें एक हाथ में उनके तलवार हो और एक में हमारे; तब हमारा जी भर जाय। वह क्या वहां से बैठे बैठे लड़कों को तथा अपने साले ससुरों को भेजते हैं, हम क्या इनपर शस्त्र चलावें"

अकबर। ठीक है, बहादुर प्रतापसिंह जो कुछ कहै सब बजा है, यह कलमे उसीको ज़ेबा हैं॥

ख़ानख़ाना। अब तो जहांपनाह मेरी इल्तिजा कुबूल हो और प्रतापसिंह पर बख़्शिश की निगाह मबज़ूल हो॥

अकबर। नवाब साहब, अगर आपलोगों की यही राय है तो मुझे कोई उज्र नहीं है, शहबाज़ख़ां को लिख भेजिये वापस चले आयें॥

पृथ्वीराज। (स्वागत) धन्य गुणग्राहकता, यह अकबर ही के हृदय का काम है॥

[एक चोबदार का प्रवेश]

चोबदार। (ज़मीन छूकर सलाम करके) जहांपनाह, उदयपुर से एक सिपाही आया है॥

अकबर। फ़ौरन हाज़िर लाओ॥

(घबराया हुआ एक मुसलमान सैनिक का प्रवेश)

सैनिक। (ज़मीन छूकर सलाम करके) खुदावन्द, बड़ा ग़ज़ब हुआ, राना ने उदयपुर पर फिर दख़ल कर लिया।

अकबर। सब सरगुज़श्त जल्द बयान कर जाओ।

सैनिक। आलीजाह, परताप मुतवातिर शिकस्त खाते खाते शिकस्तः दिल हो कर अरवली की सरहद छोड़कर भागने की फ़िक्र में हुआ, हमलोगों को इतमीनान हुआ कि अब मेवार बे खरखशः हो गया, मगर इतने ही में उसके वज़ीर ने उसे बहुत सी दौलत की मदद दी और वह एकाएक बड़ी फ़ौज इकट्ठा कर हमलोगों पर टूट पड़ा, सिपहसालार

महबाज़खां की फ़ौज को टुकड़े टुकड़े काट डाला, अब्दुल्लाखां और उसकी फ़ौज बिल्कुल मारी गई ग़रीबपरवर हमलोगों पर मुतवातिर २२ हमले किये गये। क़रीब क़रीब तमाम मेवार इस वक़्त दुश्मनों के क़ब्ज़े में है। सुना गया है कि अम्बर तक राना चढ़ गया था और मालपुरा को बाज़ार लूट ले गया। मैं किसी तरह जान बचाकर हुज़ूर को ख़बर देने आया और लोगों की मालूम नहीं क्या हालत हुई।

अकबर। (क्रोध पूर्वक ख़ानख़ाना से) कहिये अब आप क्या फ़र्माते हैं?

ख़ानख़ाना। ख़ुदावन्दा, प्रताप के लिये तो यह कोई नई बात नहीं है, मगर हुज़ूर का हुक्म जो एक मर्तबः ज़ुबान मुबारक से निकल चुका क्योंकर पलट सकता है?

अकबर। मगर इसमें सख़्त बदनामी होगी?

पृथ्वीराज। जगतविजयी अकबर के उद्दंड प्रताप को कौन नहीं जानता? प्रताप के मुक़ाबिले में अकबर को कौन बदनामी दे सकता है?

ख़ानख़ाना। और फिर मेरी अक़्ल नाक़िस में तो प्रताप ऐसे बहादुर से दरगुज़र करना ऐन फ़ख़्र का बाइस है। बल्कि उसे सताना ही बदनामी है।

(नेपथ्य से "अज़ान" का शब्द सुनाई दिया)

अकबर। नमाज़ का वक़्त हो गया, इस वक़्त यह अमूर: मुलतवी रहे, फिर ग़ौर किया जायगा।

(सभों का प्रस्थान)

अष्टम गर्भाङ्क

(स्थान उदयपुर राज्य दर्बार परम सुसज्जित तथा आलोकमय राज्य सिंहासन पर महाराणा प्रतापसिंह विराजमान, दोनों ओर गुलाबसिंह भामाशा, कविराजा आदि, तथा राजपूत और भील सर्दारगण श्रेणीबद्ध खड़े हैं)

(नर्तकीगण नाचती और गाती हैं)

गाओ गाओ आनन्द बधाइयां ।
हिन्दूपति क्षत्रिय कुल गौरव राणा सुख सरसाइयां ।
राखी लाज आज भारत की अपुनी टेक निबाहियां ॥
जुग जुग जीए मेरे साईं तन मन धन सब वारियां ॥ १ ॥

राणा । मेरे प्यारे भाइयो ! आज श्री एकलिङ्ग जी की कृपा और तुमलोगों के उद्योग से यह दिन देखने में आया कि इस पवित्र स्थान से हिन्दूद्वेषी यवनों का पैरा गया और फिर आज हमलोगों ने अपनी प्यारी जन्मभूमि का दर्शन पाया। जिस स्वाधीनता रक्षार्थ हमलोगों के अगणित पूर्व पुरुषों ने अकुंठित हो संग्राम स्थल में परम प्रिय जीवन विसर्जन किया था, आज जगदीश्वर की कृपा से वह हमें प्राप्त हुई, इससे बढ़कर भी कोई आनन्द की बात हो सकती है ? प्यारे भाइयो, बस हमारा यही उपदेश है कि संसार में जीना तो अपने गौरव सहित जीना, नहीं मरना तो हई है। आहा ! महाबाहु अर्जुन का कैसा आदरणीय और अनुकरणीय सिद्धांत था।

"आयुः रक्षति मर्माणि आयुरन्नं प्रयच्छति ।
अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्" ॥

कविराजा । ठीक है पृथ्वीनाथ, आप जो आज्ञा कर रहे हैं उसे प्रत्यक्ष उदाहरण स्वरूप कर भी दिखाया। आहा !

जो न प्रगट होते प्रताप भारत हितकारी ।

को करि सकत कलङ्करहित हिन्दू व्रतधारी॥
अकबर से उद्दंड शत्रु दरि निज प्रण राखी।
को हिन्दू गौरव की सब जग करती साखी॥
या प्रबल म्लेच्छ इतिहास मैं हिन्दू नाम बिलावती।
को हे प्रताप बिनु तुव कृपा यह अपवाद मिटावती॥

राणा। कविराजा जी, आप मुझे व्यर्थ की बड़ाई देते हैं, मैं तो निमित्त मात्र था जो ये सब राजपूत और भील सरदार--गण सहायता न करते तो मैं अकेला क्या कर सकता था? आहा! झाला महाराज मानसिंह ने तृणवत् अपना शरीर दे दिया और मुझे बचाया, महाराज खंडेराव, राजा राम सिंह ऐसे वीर पुरुषों ने मेरे लिए क्या क्या न किया। हाय! मैं अब इनके लिए क्या कर सकता हूं? बड़े कविराजा जी ने अपने देश की जैसी सेवा की और जिस भांति प्राण दिया कौन नहीं जानता? जब तक पृथ्वी रहेगी इन लोगों का यश स्वर्णाक्षरों से मेवार के इतिहास में अङ्कित रहेगा। प्यारे चेतक ने पशु होकर मेरा जैसा उपकार किया उससे मैं कभी उऋण नहीं हो सकता, मंत्रिवर, जहां चेतक का शरीर गिरा है एक उत्तम समाधि बनवाई जाय और प्रति-वर्ष उसके सम्मानार्थ वहां मेला लगा करे मैं स्वयं वहां चला करूंगा। (कविराजा से) कविराजा जी, आप एक पर्वाना लिखिये कि जब तक मेरे और भामाशा के वंश में कोई रहै, मंत्री का पद उसी को दिया जाय और मैं इन्हें प्रथम श्रेणी के सर्दारों में स्थान देकर झाटकपट ताज़ीम, पैर में सोने का लङ्गर, पाग पर मांझा आदि यावत प्रतिष्ठा बख्शता हूं, जो इनकी सेवा के आगे सर्वथा तुच्छ हैं। (गुलाब-सिंह के प्रति) वत्स गुलाबसिंह, तुमने अपने प्रण को जैसी दृढ़ता से निबाहा सबको उससे शिक्षा लेनी चाहिये,

आहा! तुम्हारा और मालती का प्रेम आदर्श स्वरूप है, तुम दोनों ने अपने अपने प्रण को दृढ़ता पूर्वक निवाहा, इसलिये अब विलम्ब का प्रयोजन नहीं; मंत्री, मेरी ओर से मालती के विवाह की तयारी की जाय, दायजे में जागीर आदि का सब प्रबंध मैं स्वयं करूंगा, आप एक शुभ मुहूर्त दिखलावें और अब इस शुभ संयोग में विलंब न करें, मैं स्वयं इन दोनों का विवाह अपने हाथ से करूंगा॥

(गुलाबसिंह राणा के पैरों पर गिरता है और राणा उठा कर हृदय से लगाता है)

(राजकुमार के प्रति) देखो कुंवर जी, अपने धर्म और देश रक्षार्थ मैंने जो जो कष्ट सहे हैं तुमने अपनी आंखों देखा है, देखो ऐसा न हो कि तुम हमारे पीछे विलास प्रियता में पड़ अपने पिता का नाम डुबाओ, प्रताप की कीर्ति पर धब्बा लगाओ, और मरने पर मेरी आत्मा को सताओ। मेरे इन वाक्यों को सदा स्मरण रखना:—

जब लौं जग मैं मान तबहिं लौं प्रान धारिये।
जब लौं तन मैं प्रान न तबलौं धर्म छाड़िये॥
जब लौं राखै धर्म तबहि लौं कीरति पावै।
जब लौं कीरति लहै जन्म स्वारथ कहवावै॥

हे वत्स सदा निज वंस की मरजादा निरवाहियो।
या तुच्छ जगत सुख कारनैं जिनि कुल नाम हंसाइयो॥ १॥

(सरदारों के प्रति) मेवार की शोभा मेरे प्यारे भाइयो,—
यह बालक अज्ञान, सौंपत तुमकों आजु हम।
जब लौं तन मैं प्रान, मान जान जिनि दीजियो॥

[सब सरदारगण सिर झुका हाथ जोड़ सजल नेत्र पृथ्वी की ओर देखते हैं]

(नर्तकीगण गाती हैं)

यह दिन सब दिन अचल रहै ।
सदा मिवार स्वतन्त्र विराजै निज गौरवहिं गहै ॥
घर घर प्रेम एकता राजै, कलह कलेस बहै ।
बल, पौरुष, उत्साह, सुदृढ़ता, आरज बंस चहै ॥
वीर प्रसविनी वीरभूमि यह वीरहिं प्रसव करै ।
इनके वीर क्रोध मैं परि अरि कायर कूर जरै ॥
राजा निज मरजाद न टारै, प्रजा न भक्ति तजै ।
परम पवित्र सुखद यह शासन सब दिन यहां सजै ॥
जब लौं अचल सुमेरु विराजत जबलौं सिन्धु गंभीर ।
तब लौं हे प्रताप तुव कीरति गावैं सब जग वीर ॥
हे करुनामय दीनबंधु हरि नित तुव कृपा बसै ।
यह आरत भारत दुख तजि कै परम सुखहि बिलसै ॥ १ ॥

(परम प्रकाश के साथ धीरे धीरे पटाक्षेप)

॥ श्री शुभम् ॥